मानव मन्दिर

फकीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट

सुतेहरी रोड, होशियारपुर

द्वारा अमूल्य भेंट

पक: परम संत परम दयाल पं: फकीर चन्द जी मह

FORM

(See Rule 8)

Place of Publication	Hoshiarpur
Date of Publication	10th of every month
Periodicity of Publication	Monthly
Printer's Name	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir, Hoshiarpur.
Editor's Name	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir, Sutehri Road, Hoshiarpur.
Name and address of individuals, who own the Manav Mandir or partners or shareholders, holding more than one Percent of the total capital.	Faqir Library Charitable Trust, Hoshiarpur.

I, Dr. Paras Ram Aggarwal hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Dated : 10-6-86 *Signature of Publisher*

Printed and Published by : Dr. Paras Ram at Shiv Dev Rao Press, Manavta Mandir Hoshiarpur, for the Faqir Library Charitable Trust, Hoshiarpur

मानवता मन्दिर में अगला मासिक सत्संग
15-6-86 को होगा ।

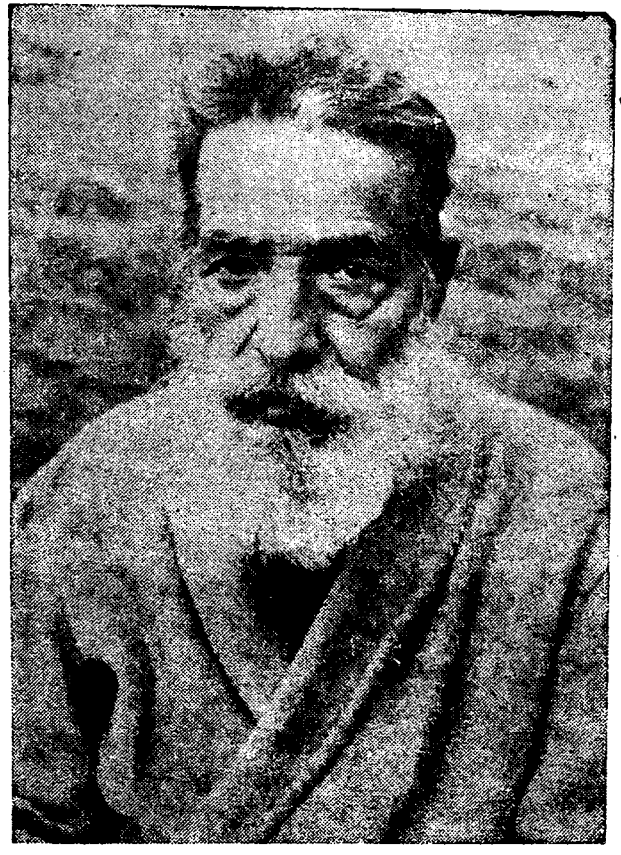

Param Sant Param Dayal Faqir Chand Ji Maharaj

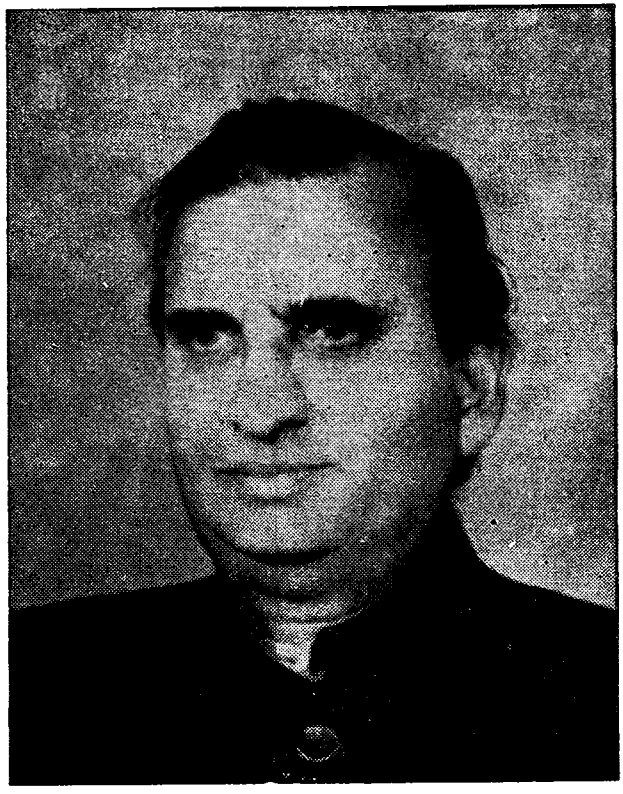

Param Sant Manav Dayal Dr. I. C. Sharma ji Maharaj

मासिक—

मानव मन्दिर

विश्व में मानव मात्र के सामाजिक सांस्कृतिक
और आध्यात्मिक कल्याण और विकास की
सेवा में संलग्न मासिक पत्र

BE MAN

मनुष्य बनो

सम्पादक :

डा॰ परश राम अग्रवाल

वर्ष 13	मंगलवार 10 जून 1986	संख्या 2

सत्संग हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज

राधास्वामी धाम 10-2-1932

नमस्कार

नमो सद्गुरुम्, सच्चिदानन्दरूपम् ।
नमो अद्भुतम्, अद्वितीयम् अनूपम् ।।
नहीं रूप कोई हैं, सब रूप तेरे ।
तेरे सबही परजा हैं, और भूप तेरे ।।
धरा सन्त अवतार, जग को चिताया ।
दुःखी दीन को अंग, अपने लगाया ।।
दिया संग सत का, मिला सत का जीवन ।
तेरे नाम पर सीस, तन मन है अर्पन ।।
झुके राधास्वामी, चरन हँसते हँसते ।
तुझे कहते हैं सब नमस्ते नमस्ते ।।

व्याख्या— ऐ जिन्दा पीर ! ऐ जीता-जागता गुरु ! तुझे बार-२ नमस्कार है । तू सत् स्वरूप है, यह तेरी ही हस्ती का करिश्मा है जिसके इज़हार के नज़ारे हमको चारों तरफ नज़र आ रहे हैं । तू ज्ञान स्वरूप है । जिस कदर अमली और इल्मी दर्जों का सामान दुनिया में बिखरा हुआ है सब तेरा है । तू आनन्द की मूर्ति है । तेरी ज़ात से सबको खुशी

मिलती है। यह तेरी ही दया है कि सब लोग तेरी शरण में आकर परमानन्द गति को प्राप्त हो जाते हैं। ऐ जीता-जागता पुरुष ! तुझको नमस्कार है। तू अद्वितीय है, लासानी है। संसार में तेरे जैसा कोई नज़र नहीं आता :—

गये दोनों जहान नज़र से गुज़र,
तेरी शकल का कोई बशर न मिला।

देश-देश घूमे और फिरे, हज़ारों सूरतें आँखों के सामने आईं परन्तु अगर नहीं मिला तो तेरी लकल का कोई इन्सान नहीं मिला। तू अजीबो-ग़रीब है। तू हैरत की सूरत है। तेरी स्तुति करते हुए ज़बान काँपती है। असलियत यह है कि तू बेमिसाल है।

मैंने अभी यह कहा है कि तू सत् स्वरूप है, तमाम हस्ती तेरे ज़हूर का जलवा है परन्तु जब असलियत की तरफ निगाह जाती है तो साफ तौर पर अनुभव होता है कि तेरी कोई भी सूरत नहीं है। तू बेशकल है, तू निराकार है। तू निर्गुण है। फिर मैंने क्यों कहा कि तू शकल वाला है ? कारण यह है कि संसार में जितनी सूरतें नज़र आ रही हैं सब तेरी ही हैं। तू बेशकल होता हुआ भी सब की शकलों में विराजमान है।

न गौहर में है और न है संग में।
वा लेकिन चमकता है हर रंग में ॥

कोई सूरत ऐसी नहीं है जो तेरे सहारे कायम न हो और जो तेरी झलक से खाली हो। इस वास्ते यह कहना पड़ता है कि तू बेशकल वाला है और ये तमाम सूरतें तेरी ही हैं और इन सूरतों के अन्दर तू मुझको नज़र आ रहा है :-

'जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है'

मैं इस संसार को तेरे कारण सही मानता हुआ सच्चे दिल से कहता हूँ कि तमाम राजे-महाराजे और इस संसार

के सारे लोग तेरे ही हैं और तेरे साथ गुथे हुए हैं। जिस प्रकार मोतियों की माला के अन्दर एक सूत पिरोया हुआ होता है इसी प्रकार से तू भी सब में और सब के अन्दर ओत-प्रोत हो रहा है।

तूने बड़ी दया की सन्त रूप धारण कर संसार को चिताया। यह मैं इस कारण से कहता हूं कि तू चित् रूप है। जितनी चेतावनी, जितनी विद्या और जितने इल्म संसार में नज़र आ रहे हैं ये सब के सब तेरे चित् रूप का अक्स हैं तो सब के दिल भी तेरे ही हैं। अगर इन सब को बनाने वाला तू है तो सारे ज्ञान-ध्यान का करिश्मा भी तेरी ही ज़ात का तमाशा है।

दो बातें हो गईं—नम्बर एक तू सत् है, नम्बर दो तू चित् है। अब रह गई तीसरी बात कि तू आनन्द की मूर्ति है। इसकी समझ मुझको कैसे आई ? इसकी समझ इस तरह आई कि तूने सन्त रूप में प्रकट होकर दुःखी जीवों को अपने अंग से लगाया। ये तीन तापों से झुलसे हुए प्राणी बावेला मचा रहे थे। ऐ मेरे सच्चे मालिक ! तू आया (सत् हुआ), तूने चेतावनी दी (त चित् हुआ) और इन दोनों तरीक़ों के ज़रिये अपनी ज़ाहिरी सूरत और ज़ाहिरी ज़बान या ज़ाहिरी इल्म के ज़रिये तूने इन दुःखी जीवों को सच्ची खुशी का रास्ता दिखाया (तू आनन्द रूप हुआ)। ऐ गुरु ! मैंने इन तीन शकलों में तेरा दर्शन पाया। तू सत् है यानि शक़्ल वाला है। तू चित् है यानि अकेला और दिल वाला है और तू आनन्द स्वरूप है। अगर तुझ में हस्ती न होती तो तू किसी को हस्ती की बरकत कैसे दे सकता था। अगर तुझ में ज्ञान न होता तो तू किसी को चेतावनी कैसे देता। अगर तू आनन्दमूर्ति न होता तो किस तरह दुःखियों को अपने दुःख दूर करने का सामान हाथ आता। तू सच्चिदा-

नन्द है और तुमको नमस्कार है।

तूने सच्ची हस्ती का नाम हमको किस तरह से बख्शा। तूने अपनी संगत में हमको जगह दी। अपनी उपासना कराई। इसका मतलब यह था कि हमारे अन्दर जीवन आये, हम तेरा रंग कबूल करके रंगीन हो जायें। हमारे अन्दर वही चमक-दमक पैदा हो जो तेरे अन्दर है। जिस तरह सूर्य की रोशनी को पाकर तमाम दुनिया रोशन हो जाती है इसी प्रकार तेरी शरण में बैठकर हमने असली ज़िन्दगी का सबक पढ़ा और हमको ज़िन्दगी की समझ आ गई। ज़िन्दगी कुढ़ने, बाबेला मचाने और दुःख के आँसू बहाने का नाम नहीं है। ज़िन्दगी नाम है खुशी का। ज़िन्दगी नाम है आनन्द और सुख का :—

ज़िन्दगी ज़िन्दादिली का नाम है,
मुर्दा दिल खाक जिया करते हैं।

जो हर वक्त रोते और झींकते रहते हैं समझ में नहीं आता कि दुनिया उनको ज़िन्दा कैसे कहती है क्योंकि खुली आँखों से हम देखते हैं कि जब आदमी मर जाता है तब मातम किया जाता है, रोना-धोना होता है और मातमी गाने गाये जाते हैं और जब इन्सान पैदा होता है तो हँसी-खुशी के गाने गाये जाते हैं। औरतें मुबारकबाद देते हुए सोहर सुनाती हैं। इससे साफ साबित होता है कि ज़िन्दगी खुशी का नाम है और मौत दुःख का नाम है। जो तेरी संगत में बैठकर खुशी का जीवन गुज़ारते हैं वो ज़िन्दा हैं और जो तेरी सेवा से दूर रहकर रोते और झींकते हैं वो मुर्दा हैं।

किस तरह तूने अपनी संगत से हमको सच्ची ज़िन्दगी बख्शी ? यह प्रश्न है जिसका उत्तर मुर्दादिलों को नहीं मिला। क्यों ? खुश रहने का राज़ या गुर उनके हाथ नहीं आया। वो गुर तेरा नाम है और यह नाम तेरी इतनी कीमती

बख्शिश है कि जिसका मुआवजा अदा करना इन्सान की ताक़त से बाहर है :—

सत्तनाम की इव्ज में देने को कुछ नाहिं।
कहाँ लग गुरु सन्तोषिये हवस रही मन माहिं॥

मुझे और तो कुछ नहीं सूझी मैंने तेरे नाम पर तन, मन और सीस को अर्पण कर दिया :—

दिलो दीं जानो ईमां है जो लेना हो सनम ले सो।
नहीं कुछ उजर देने में अगर चाहो कसम ले लो॥

अगर तूने नाम की बख्शिश की तो मैंने इसके बदले में अपना मन तुझको दिया :—

मन दिया जब अपना मन के संग शरीर।
अब देनें को क्या रहा यूँ कहें दास कबीर॥

परन्तु इस देने में कसर रह गई। तन का देना सहल है लेकिन मन का देना बहुत मुश्किल है। मन का देना भी सहल है लेकिन निज मन का देना बड़ा कठिन है। मूर्ख! संगत में बैठता है और कहता है कि मैं नाम भी लेता हूं और यह भी कहता है कि तन, मन, धन सब गुरु को अर्पण कर दिया लेकिन क्या वह सच्चा है? यह प्रश्न अपने दिल से हर शख्स कर सकता है :—

मन दिया कहीं और ही तन साधु के संग।
कहें कबीर कोरी गजी कैसे लागे रंग॥

कोई इस मस्खरे से पूछे कि तूने तन कब दिया था और मन कब दिया था? तेरे अन्दर कुछ सच्चाई भी है या यूँ ही डींग मारता है :-

मन दिया तो भल किया निज मन दिया न जाय।
कहें कबीर ता दास से कैसे मन पतियाय॥

प्रश्न यह है कि निज मन दिया है या नहीं दिया? अगर दिया होता तो सच्चा सेवक बन जाता। नहीं दिया

इसलिए सेवक नहीं है :—

तन मन दिया अपना निज मन ताके संग ।
कहें कबीर निर्भय भया सुन सत्तगुरु प्रसंग ।।

जिसने तन दिया है और मन दिया है आर साथ ही निज मन भी दिया है उसके बारे सन्त कहते हैं कि गुरु के सत्संग से उसने पूरा-पूरा फायदा उठाया और उसकी ज़िन्दगी बेखौफ़ी की ज़िन्दगी हो गई। सत्संग की ज़िन्दगी ने इसे बना दिया। वह सबर और मालिक की मौज के सीधे रास्ते से अपने मुँह को नहीं मोड़ता।"

जो आदमी कहता है कि मैंने निज मन दिया, कोई इससे पूछे कि जब तूने निज मन दे दिया तो अब किस मन से कह रहा है कि मैंने मन दिया है ? मन तो तेरा रहा नहीं इसलिए जो आदमी कहता है कि मैंने गुरु को अपना मन दे रखा है वह या तो बावला है या मस्खरा है और या हद दर्जे का झूठा और मक्कार है। जिसने अपने तन, मन और निजमन को दे रखा है उसके सिर का बोझ तो हमेशा के लिए उतर गया और हल्का हो गया और अगर हासत इसके उलट है तो समझ लो कि न किसी ने दिया और न किसी ने लिया। न नाम की प्राप्ति हुई और न नाम के बदले और शुक्राना में तन, मन दिया गया। अभी तक उस सेवक के पीछे काल, कर्म के भूत लगे हुए हैं और परिणाम यह होता है कि वह हर वक्त ठोकरें खाता फिरता है। सेवक का बोझ स्वामी के सिर पर है। वह हल्का रहता है। सुख, दुःख सब बर्दाश्त करता है। शिकायत का शब्द कभी ज़बान पर नहीं लाता और हँसता-खेलता हुआ अपना जीवन पूरा करता है। जिनकी यह अवस्था है वे तो सेवक हैं और जिनकी यह अवस्था नहीं है वे अभी तक कुछ और हैं। आगे क्या होगा, कुछ नहीं कहा जा सकता :—

तन मन दिया तो भल किया सर से उतरा भार।
जो कबहूं कह मैं दिया तो बहुत सहेगा मार ।।

फिर क्या करना चाहिए और उस करने से क्या होगा ? इसका उत्तर नीचे के दोहे में तुमको मिलेगा :—

निज मन तो नीचा किया, चरण कमल की ठौर।
कहें कबीर गुरु देव बिन, नजर न आबे और ।।
गुरु को सर पर राखिये, चलिये आज्ञा माहँ।
कहें कबीर ता दास को तीन लोक भय नाहें ।।
गुरु माथे से उतरे, शब्द बहु ना होय ।
ताको काल घसीटिये, रोक न सके कोय ।।

नाम मिला सब कुछ मिल गया, नाम नहीं मिला तो कुछ भी नहीं मिला। इस नाम लेने की तीन तरकीबों का इस चौथी कड़ी में इशारा है।

"तेरे नाम पर सीस तन मन है अर्पअ।"

तन, मन और सीस तीनों नाम के अर्पण हो गये। ख्याल आता है कि तन, मन और सीस किस तरह से अर्पण किया और फिर साथ ही नाम लेने का इकरार कैसे हो रहा है। नाम तीन तरीके से लिया जाता है। ज़बान से नाम लेना, तन से नाम लेना है क्योंकि ज़बान शरीर का एक अंग है। मन से नाम लेना दिल से नाम लेना है और सिर से नाम लेना सारे अंगों से नाम लेते हुए उसमें महव हो जाना है।

ज़बान से नाम लेना जाप है जिसमें शरीर के साथ दिल और सुरत दोनों शामिल रहते हैं। मन से नाम लेना अजपाजाप है जिसमें दिल के साथ सुरत शामिल है। और सिर से नाम लेना अनहद है जिसमें केवल सुख ही सुख है। ये तीनों हालतें नश्वर हैं इनमें से किसी का भी एतवार नहीं है, एतवार उसका है जिसकी सुरत नाम में समा गई हैं :—

जाप मरे अजपा मरे अनहद भी मर जाय।
सुरत समानी शब्द में ताही काल नहीं खाय॥

ज़बान से नाम लेना शारीरिक शुग़ल है। मन से नाम लेना मानसिक शुग़ल है और सिर से नाम लेना आध्यात्मिक शुग़ल है। इन तीनों के परे चौथा दर्जा आता है। जिस समय वह प्राप्त हो जाता है फिर कहने-सुनने की ज़रूरत बाकी नहीं रहती। पहिले तीनों दर्ज़े त्रिलोकी के स्थान हैं जो त्रिलोकी में रहकर नाम लेते हैं वे साधन तो कर रहे हैं परन्तु वास्तविक नाम जब मिलेगा चौथे पद में मिलेगा :—

नाम रहे चौथे पद माहीं, ढूँढ़ें त्रैलोकी माहीं।
तीन छोड़ चौथा पद दीन्हा, सतनाम सतगुरु गति चीन्हा॥

मुँह से नाम लेते हो, अच्छा करते हो। मन से स्मरण करते हो, बहुत अच्छा करते हो। अन्दर में शब्द सुनते हो बहुत ही अच्छा करते हो। मुँह से नाम लेना वर्णात्मक नाम कहलाता है और मन से नाम लेना मानसिक नाम कहलाता है और सुरत से नाम लेना धुनात्मक नाम कहलाता है। वर्ण शारीरिक है। मानसिक जाप या अजपा जाप ख्याली है और धुन में सुरत का लगाना (धुनात्मक) है।

वर्णात्मक नाम लिखा जाता है और मानसिक नाम इस वर्णात्मक नाम का प्राकट्य है और सुरत से धुन का सुनना इन सब से ऊँची अवस्था है और सबसे ज्यादा इसकी प्रधानता है।

नाम लिया गया, ज़बान, दिल और सुरत तीनों से उसका प्रारम्भ हुआ। ज़बान सो गई, मन और सुरत अभी तक जागते हैं। सुरत शब्द की ओर झुकी, मन सो गया। सुरत जागती है और धुन को सुन रही है। सुनते-सुनते खुद उसमें महब हो गई। सुरत और शब्द दोनों का मिलाप हो गया। अब सुरत शब्द के अन्दर ऐसी सो गई कि न सुरत का ज्ञान बाकी रहा न शब्द का। इस तरह से नाम लेने

अपने तन, मन और सीस को नाम पर अर्पण करता है।

अर्पण तो हो गया अभी जीवन के कारोबार बाकी हैं। व्यवहार भी है, प्रतिभास भी है, परमार्थ भी है। फिर इस नाम लेने वाले की गति की परख कैसे की जाती है ? इस प्रश्न का उत्तर नीचे की आखिरी कड़ी में दिया जाता है :—

झुके राधास्वामी चरण हँसते हँसते।
तुझे कहते हैं सब नमस्ते नमस्ते ॥

हँसी और खुशी का जीवन गुज़ारते हुए सिर हमेशा सतपुरुष राधास्वामी दयाल के चरणों में झुका रहे। फिर यह प्रतीत होने लगता है कि सारी दुनिया उसी एक सच्चे मालिक की सेवा और पूजा का कर्त्तव्य निभा रही है :—

जिधर देखता हूं उधर तू ही तू है।
तेरा तज़करा दहर में कू-ब-कू है ॥

सेवक की सांसारिक जीवन इस प्रकार अपनी हस्ती के प्रकट करने का तमाशा दिखाता है।

सत्संग परमदयाल

फ़कीरचन्द जी महाराज

मानवता मन्दिर होशियारपुर

15 - 4 - 73

मंगलम् अशब्द अरूप, शब्द रूप स्वामी ।
मंगलम् अलख अनाम, अगम नाम नामी ।।
मंगलम् दीनबन्धु, दीन नाथ दाता ।
मंगलम् अभेद भेद, आनन्द घन त्राता ।।
महिमा अनन्त आदि, अन्त कौन गावे ।
भेद तेरा कौन जाने, कौन कह सुनाये ।।
सन्त भेस प्रगट जगत, जीव को चिताया ।
काल कर्म फन्द काट, धुर ले पंहुँचाया ।।
प्रथम तत्त्व निज स्वरूप, पद कमल नमामी ।
गाऊँ ध्याऊँ रात दिवस, भजूँ राधास्वामी ।।

राधास्वामी ! मैं सतगुरु को बाहर समझा करता था । कभी कहता था कि वो लाहौर में रहते हैं और कभी कहता था कि वो धाम में रहते हैं । बसरे-बग़दाद से मुझे तीन महीने की छुट्टी मिलती तो मैं बड़े चाव से धाम में पड़ा रहता । हज़ूर दाता दयाल जी महाराज मुझे समझाया करते थे और मेरे नाम लिखा भी करते थे :—

फ़कीरा गुरु तो तेरे पास,
तेरे तन में तेरे मन में तेरे स्वासों स्वास ।

मगर मुझे समझ नहीं आती थी । यह जो काम हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे दिया था यह तुम लोगों के कल्याण के लिए नहीं दिया था । मुझ को सच्चाई का अनुभव कराने के लिए कि इस बेवकूफ को असलियत का पता लग जाये उन्होंने मुझे गुरुआई दी थी । आजकल तो हर एक आदमी गुरु बनना चाहता है । सन्त उनको गुरु बनाते हैं जिन्होंने सेवा की हुई होती है और जिनको समझ नहीं आती और जो अभी तक अधूरे हैं । यही हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे कहा था । मैं उनके पीछे फिरता था और गुरु का रूप देखने की कोशिश किया करता था । वाणी में आता है :—

गुरु मोहे अपना रूप दिखाओ ।
यह रूप मोहे प्यारा लागे इसीसे उसको दरसाओ ।।

मैं भी इसी खब्त में था तो उन्होंने मुझे यह काम दिया था । मैं न गुरु हूं न महात्मा हूं, और न मुझे गुरु बनने की इच्छा है । यह कमालपुर वाली माई है मैंने इसको क्या दिया ? यह समझती है कि मैं इसके अन्दर गया और तीन साल में सारे दर्जे पास करा गया । मैंने इसको गूरु पदवी दे दी और आज्ञा दी कि औरतों को नामदान दिया करो । अब इसकी आँख खुल गई । जब दूसरी औरतें कहती हैं कि माता जी, आपने मेरा यह काम कर दिया और वो काम कर दिका तो यह कहती है कि मैं नहीं होती तो इस बात से इसको समझ आ गई कि गुरु क्या है ? मुझको इस बात की समझ नहीं आती थी कि गुरु मेरे पास कैसे है । यह समझ मुझको तुम लोगों से आई । मैंने ये जो दो-चार सत्संग दिये हैं और मैंने इनमें जो कुछ कहा है जो लोग दिमाग

रखते हैं वे इस बात को सोचें कि मैं तो कहीं जाता नहीं और न ही मुझे पता होता है। लोग अपने अन्दर अपने विश्वास से मेरा रूप बना लेते हैं और वह रूप उनकी मदद कर जाता है। मैंने वह राज़ खोला है जिसको किसी महात्मा ने पब्लिक प्लेटफार्म पर नहीं कहा। इससे हानि भी है इज़्ज़त नहीं होती, मान नहीं मिलता और न ही पैसा मिलता है। जिसको यह विश्वास हो जाये कि गुरु तो हर समय मेरे पास है वो फ़कीरचन्द के पास क्यों जायेगा और उसको जाने की ज़रूरत भी क्या है ? उसका तो वो झगड़ा समाप्त हो गया। तो मुझे कैसे विश्वास हुआ कि गुरु मेरे पास है ? सिर्फ तुम्हीं जोगों से। जब ऐसी-ऐसी बातें सुनीं तो मेरी आँखें खुल गईं कि ओहो ! बात क्या थी और मैं क्या समझा था। मगर तुम लोगों के लिए मेरी यह शिक्षा हानिकारक भी है। क्यों ? तुम तो दुनिया चाहते हो। तुमको दुनिया की ज़रूरत है। जिनको दुनिया की ज़रूरत है उनके लिए सन्तमत नहीं है। सन्तमत उनके लिए है :—

विषयों से जो होय उदासा, परमारथ की जा मन आसा।
धन सन्तान प्रीत नहीं जाके, खोजत फिरे साध गुरु जागे ॥

यह सन्तमत जो है इसकी ऊँची तालीम आम जनता के लिए नहीं है। हम गुरुओं ने अपने नाम, अपनी इज़्ज़त अपने मान और अपना डेरा बढ़ाने के लिए जो शख्स भी आया उसको नाम दे दिया। चेले बनाते चले गये। यह तालीम आम दुनिया के लिए नहीं है आम दुनिया के लिए है वेद मार्ग। मैंने परसों भी कहा था कि तुम लोग खुद सोचो कि जब तक आदमी अपने विश्वास से मेरा रूप बना कर उससे अपना काम ले लेता है और मैं तो होता नहीं तो साबित हो गया कि इन्सान के ख्याल में या उसकी चाह या उसकी वासना में इतनी ताक़त है कि वो एक स्थूल माद्दा

को पैदा कर सकता है। मुझको दाता ने कहा था फ़कीर! तेरा बेड़ा सत्संगी पार करेंगे और कर दिया। अलीगढ़ में यादव राम एक हेउ मास्टर है काफी अर्से की बात है मैं वहाँ सत्संग दे रहा था और यही बात बता रहा था कि लोगों के अन्दर मेरा रूप प्रकट होता है उनका काम कर जाता है मगर मैं नहीं होता और न ही मुझे कोई पता होता है तो वह एक कबीर पन्थी साधु को ले कर खड़ा हो गया और कहने लगा आप कहते हैं कि मैं नहीं जाता तो हम झूठ बोलते हैं ? मैंने कहा कि क्यों ? उसने अपनी डायरी निकाली और कहने लगा कि 26 जून (साल मुझे याद नहीं) को मैं जगह वरेती (दरिया की रेत में) यह साधु भी मेरे साथ था वहाँ आप आये यही कपड़े थे और सोटी हाथ में थी। हमने आप से पूछा कि 'मनुष्य बनो' में आपका यहाँ आने का कोई प्रोग्राम नहीं था। आप यहाँ कैसे आ गये ? आप ने कहा कि लोग मुझे जानते हैं मैं हर जगह रहता हूं। तुमको यह कहने के लिए आया हूं कि तुम अपने घर वापस चले जाओ यह बात कही और आप ओझल हो गये। अब मैं खुद हैरान था कि उस कबीर पन्थी साधु ने और यादव राम दोनों ने मुझे देखा। मैंने पूछा कि तुम यह बताओ कि तुम यहाँ वरेती में कैसे आये कहने लगा मैं आपका सत्संग शाम को सुन कर 8 बजे घर पहुँच जाया करता था। कुछ सत्संगी आये हुए थे तो उस दिन मुझे घर पहुँचने में देर हो गई। घर पहुँचते ही बीबी काफी नाराज़ हो गई। कई औरतें ऐसा कहा करती हैं कि घर में बच्चे भूखे बैठे हैं और आप सत्संग करते रहते हो, देर से आते हो क्योंकि आपको कहा हुआ है कि घर में शान्ति रखो। मैं बोला नहीं मगर मुझे गुस्सा ज़रूर था चुपचाप सो गया। 5 बजे सुबह सैर को जाया करता था और 7 बजे वापिस

आ जाया करता था उस दिन मैं वापिस नहीं लौटा। औरत ने सोचा कि मैं गुस्से में घर से भाग गया। तो वह अपने मन से मेरे फोटो के सामने प्रार्थना करने लगी और बेहोश हो गई। उसके ख़्याल की ताक़त ने वहाँ मेरा रूप बना कर उससे तुम कहलवाया कि तुम वापिस घर चले जाओ। यह मिसाल तुमको इसलिए दे रहा हूं कि तुमको यह यक़ीन हो जाये कि तुम्हारे मन के संकल्प में या तुम्हारे ख़्याल में एक ज़बरदस्त ताक़त है। अगर तुम दुनिया में सुख चाहते हो उसके लिए तुम्हारे दिल में सच्ची वासना और सच्चा ख्याल होना चाहिए। यादव राम की औरत की सच्ची वासना ही तो थी कि उसने मेरा रूप बना लिया परन्तु लोग तो घरों में लड़ते रहते हैं। पति और पत्नी की आपस में बनती नहीं। कल भी मेरे पास दो औरतें आईं औव अपने पतियों की शिकायत करने लगीं कि वे हमको तंग करते हैं। तो नफ़रत और द्वेष के जो ख्यालात मन से निकलते रहते हैं वे अपना असर ज़रूर करते हैं। इस कारण घर में सुख और शान्ति नहीं होती। चूँकि दाता ने मुझे आज्ञा दी थी कि चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल देना इसलिए मैं शिक्षा को बदल रहा हूं कि ऐ इन्सान! अपनी नीयत को साफ रख और अपने मन में किसी के लिए वैर-विरोध ईर्ष्या और द्वेष मत रख। तुम्हारे ही ख्याल और विचार ने और तुम्हारी ही आस ने तुमको अच्छा बनाया है और तुम्हारे ही ख्याल ने तुमको बुरा बनाना है। अगर कोई आदमी मन के जाल से बचना चाहता है कि वह फिर इस जन्म-मरण के चक्र में न आये तो उसको मन से ऊँचा जाना चाहिए। मन से ऊँचा है प्रकाश और शब्द इसलिए सन्तों के मार्ग में निवृत्तिमार्ग के ख्याल से प्रकाश और शब्द का साधन बताया जाता है। और यदि संसार में ठीक रहना

चाहते हो तो शिवसंकल्पमस्तु के असूल पर चलो और कल्याणकारी ख्यालात रखो, किसी का बुरा न सोचो, किसी से द्वेषभाव मत रखो और किसी से खामखा झगड़ा मत करो। इसलिए सत्संग की महिमा है। सत्संग से सच्ची समझ और सच्चा विवेक मिलता है। चूंकि मेरे ज़िम्मे एक ऋण था तो मैंने अपने ऋण को उतारने के लिए ये सारे पापड़ बेले। सच तो यह है कि सत्संग कराना भी माया का जाल है। सिवाय माया के और दुःख के इसमें और कुछ नहीं। मैं ही जानता हूं कि मैं कितना दुःखी हूं। इस उमर में हजूर दाता दयाल जी महाराज भी दुःखी थे। उन्होंने नौनिधराग को एक पत्र में लिखा था कि सुदा मुझको इन सत्संगियों से बचाये। तुम लोग संसार की आशाओं में ग्रस्त हो गुरुओं के पास जाते हो और उनको तंग करते हो। कई बार मैं अनुभव करता हूं कि जिन लोगों ने मुझे भी तंग किया उनके लिए मेरे मन में नफ़रत का ख्याल भी आया। मैं सच्चा आदमी हूं और सच बता रहा हूं इसलिए गुरुभक्ति है। तुम गुरुभक्ति यह समझते हो कि बताशे ले आये या और प्रशाद ले आये, कपड़े बना दिये या पैसे दे दिये। यह तो बच्चों का खेल है परन्तु जो तमोगुणी जीव हैं उनके लिए यह भी लाज़मी है, इसके बगैर भी गुज़ारा नहीं। असली गुरुभक्ति क्या है? गुरु के सत्संग में जाओ, उसकी वाणी को सुनो, गुणों और उस पर अमल करो :—

सुरत प्यारी कर सतगुरु का ध्यान।
सतगुरु तेरे घट में बसते तू फिरे चारों खान॥

जो आदमी सतगुरु को व्यास में या होशियारपुर में या आनन्दपुर में ढूंढता है वह ग़लती पर है मगर हाँ! बाहर के सत्संग से जीव को समझ मिल जाती है और वह बहिर्मुखी से अन्तर्मुखी हो जाता है। मैं बहिर्मुखी था, दाता से मेरा

बहुत ज़्यादा प्रेम था, जैसे सस्सी का या पुन्नूं का या मां का या बच्चे का। अमर दाता ऐसे कह देते जैसे मैं कहता हूं तो मैं विश्वास न करता। अगर दाता मुझे यह कह देते कि फ़कीर मैं तेरे अन्दर नहीं गया तो मेरा विश्वास टूटता परन्तु मेरा विश्वास टूटता तो था ही नहीं क्योंकि मेरा एक दृश्य था। मैं अब भी इस उमर में उस मालिक को दाता के रूप में मानता हूं। मैं नहीं समझता कि मेरा गुरु मर गया है, हरगिज़ नहीं। मैं जब मन में होता हूं तो दाता के रूप का ध्यान करता हूं और उस रूप को मालिक का रूप मानता हूं। बात मेरी समझ में आ गई। जब तक मन है यह ध्यान करने से हट नहीं सकता परन्तु जो असली गुरु है वह तुम्हारे मन के अन्दर रहता है :--

सुरत प्यारी कर सतगुरु का ध्यान ।
सतगुरु तेरे घट में बसते तू फिरे चारों खान ।।
भ्रू के मध्य में तिल है तीसरा वहाँ है ठौर ठिकान ।।

तुम्हारा मन चंचल है, कभी इधर दौड़ता है और कभी उधर दौड़ता है। जब यह यहाँ भ्रू मध्य में ठहर जायेगा तो तुमको ठौर-ठिकाना मिल जायेगा इसलिए पहला नाम जो है वह है सुमिरन और ध्यान। तो जब तक आदमी अपनी वृत्ति को सुमिरन और ध्यान में नहीं लगायेगा उसको शान्ति नहीं मिलेगी। कई लोग मेरे पास आते हैं और कहते हैं कि हमको शान्ति नहीं मिलती। शान्ति तुमको मिले कैसे ? जब तक तुम्हारे मन की वृत्तियाँ इकट्ठी होकर यहाँ नहीं ठहरेंगी, तुम्हारे मन की चंचलता दूर नहीं हो सकती। इस चंचलता को दूर करने के लिए तुम्हारी मर्जी है राधास्वामी मत के असूल के मुताबिक मन की वृत्तियों को इकठ्ठा करके मन की शान्ति ले लो। तुम्हारी मर्ज़ी है किसी और पन्थ के मुताबिक वृत्तियाँ इकठ्ठी करके मन की शान्ति ले लो। मैंने ये तजर्बे

किये हुए हैं। जालन्धर का एक सिविल सर्जन और उसकी औरत शिवरात्रि के अवसर पर मेरे पास मास्टर मोहन लाल के मकान पर आये। उसने मुझे अपने मन की शिकायत की। मैंने उससे कहा कि तू बहुत कामी है, विषय कम करो। हमारे मन की ज़्यादा अशान्ति का मूल कारण पचासफीसदी तो विषय-विकार का जीवन है। मैंने सोचा कि अगर मैं इसको राधास्वामी मत का नाम बताऊंगा तो चूंकि यह डाक्टर है यह मानेगा नहीं। मैंने उसको कुछ लेक्चर दिया और कहा कि एक से लेकर सौ तक गिनो और फिर सौ से उल्टी गिनती करते हुए एक तक आओ। आध घण्टा सुबह और आध घण्टा शाम रोज़ाना यह प्रैक्टिस किया करो। मैंने ऐसा क्यों कहा ? जब हम एक से गिनना शुरू करते हैं तो चूंकि आदत पड़ी हुई है इसलिए हमारा ध्यान चाहे कहीं भी रहे परन्तु मन से हम एक, दो, तीन, चार इत्यादि बड़ी सरलता से गिनते चले जायेंगे परन्तु जब ऊपर से नीचे यानि 100, 99, 98, 97, 96, 95 इत्यादि गिनती करते हुए जब तक हमारा पूरा ध्यान उसमें नहीं होगा हम गिनती नहीं कर सकेंगे। चालीस दिन के बाद उसने आकर मुझे बताया कि मेरी तकलीफ दूर हो गई है। ऐसे ही जो आदमी अशान्त है और घबराता है उसका इलाज है सुमिरन, ध्यान और अजपा जाप। मन को ठहरा कर अगर राधास्वामी नाम जपते हो तो लम्बा-२ राऽऽऽधाऽऽऽऽ स्वाऽऽऽऽमीऽऽ जपो। अगर ओम् जपते हो तो ओऽऽऽम्ऽऽऽ जपो। अगर वाहेगुरु जपते हो तो वाऽऽऽहेऽऽऽऽऽगुऽऽऽरुऽऽऽ जपो। मतलब यह कि मन को इकठ्ठा करके सुमिरन किया करो ताकि तुम्हारे मन को शान्ति मिले। परन्तु जिनको दुनिया की आशाएँ हैं तो वो जब सुमिरन करेंगे या अभ्यास करने बैठेंगे तो उनके सामने दुनिया ही आयेगी। कभी औरत आ जायेगी, कभी

बच्चे आ जायेंगे, कभी मुकद्दमा आ जायेगा या कुछ और आ जायेगा। यह शिक्षा अधिकारी लोगों के लिए है इसलिए मैं किसी को नाम नहीं देता। मैं जानता हूँ कि लोग अधिकारी नहीं हैं। सच्ची बात बता देता हूँ। जो मेरी बात को समझ कर अभ्यास करता है उसको फायदा पहुँच जाता है और क्रेडिट मुझे मिल जाता है।

आप लोग सत्संग में आये हो आपका धन्यवाद। मेरे पास जो कुछ है वो मैं अपने साथ नहीं ले जाऊंगा। कोई चीज़ मैंने छुपा कर नहीं रखी, कोई पर्दा नहीं रखा। इससे एक हानि अवश्य है कि यदि मैं भी पर्दा रखता तो जिस तरह निरंकारी गुरु के ऊपर हवाई जहाज़ से फूलों की वर्षा होती है मेरे ऊपर भी होती। जितना दिल चाहे मैं धन इकठ्ठा कर लेता मगर मेरी ज़मीर ने मुझे इजाज़त नहीं दी। मैंने जब सन्तों की ज़िन्दगियाँ देखीं कि उनके लड़के आज्ञा-कारी नहीं थे, उनके घर में भी झगड़े थे, उनको भी बीमारियाँ आईं तो मैं सोचने लगा कि इनके साथ ऐसा क्यों हुआ ? मानना पड़ता है कि ये इनके अपने कर्म थे। फकीर-चन्द हो या राधास्वामी दयाल हों या हज़ूर दाता दयाल जी हों या गुरु नानक साहिब जी हों, कोई भी हो सबने अपने-२ कर्म भोगे। तो मैं डर गया। मैंने सोचा कि फकीरचन्द अगर तू पर्दा रखेगा तो लोग तेरा मान करेंगे, तेरी इज़्ज़त करेंगे, तुम्हें पैसे देंगे और तेरे नाम का ढिंढोरा पिटवायेंगे। तो तू इस कर्म के बदले कहाँ जायेगा। तुमको भी यह कर्म भोगना पड़ेगा। अगर आवागमन का सिलसिला ठीक है तो इस कर्म का फल तुमको इस जन्म में या अगले जन्मों में भोगना पड़ेगा। आप लोग आये हैं मैं आपको वो बताना चाहता हूँ जो कुछ मेरे साथ बीती और जो कुछ मैंने समझा है वो सारे का सारा ग़लत हो। यह तो रिसर्च है मुझे कोई

दावा नहीं। मैं गुरुसेवक हूँ। अगर मैं गुरु की आज्ञा नहीं मानता तो मेरी आत्मा पर एक प्रकार का बोझ रहता। मैंने उनके साथ वायदा किया था। जिस दिल उनका चोला छूटा मेरे लिए तो वो मरे नहीं थे तो मैंने उनके नाम एक तार भेजा था, जिसमें मैंने लिखा था :--

I solomnly promise that I shall spread thy true teachings throughout the universe to the best of my ability and circumstances.

तो मैंने हजूर दाता दयाल जी महाराज के साथ जो वायदा किया था उसको पूरा करने के लिए और उनके हुकम की पूर्ति के लिए यह सारा खेल खेला। अब आप लोग आ जाते हो तो मैंने तुमको बता दिया कि अगर तुम दुनिया के पीछे फिरते हो तो उसके दरबार में कोई कमी नहीं दुनिया भी मिल जाती है। अगर तुम्हारी इच्छाएँ ज्यादा हैं तो उनको पूरा होने में देर लगेगी। अगर एक ही इच्छा है और तुम सच्चे बनकर उसके पीछे चलते हो तो वह जल्दी पूरी हो जायेगी। तुम्हारी ही एकाग्रता का फल तुम्हें मिलेगा। तुमको सच्ची बात बता दी। लाग-लपेट की कोई बात नहीं। मेरी तो आँखें खुल गईं। ऐसे-२ केस मेरे सामने आये हैं कि जिनका कोई हिसाब नहीं। मैं तो कहीं जाता नहीं और न ही मुझे कोई पता होता है। आग लगे ऐसी गुरुआई को जिसमें मुझे झूठ बोलना पड़े, धोखा देना पड़े और कपट करना पड़े। मैं ऐसी गुरुआई करना नहीं चाहता। कर्म का फल सबको भोगना पड़ता है। अवतार तक भी कर्म से नहीं बचे। अगर राम ने छुपकर बाली को मारा था तो भील ने कृष्ण को मार दिया। मुझसे जहाँ तक हो सकता है मैं अपनी नीयत को साफ रखता हूँ। अपने कर्म को अनुकूल बनाने की कोशिश करो। गिरता तो मैं भी रहता

हूँ। सच्ची बात आपको बता रहा हूँ। कोई भी इन्सान जो इस संसार में आया ख़्वाह वो स्वामी जी थे, कबीर साहिब या गुरु नानक साहिब थे या कोई पीर या पैग़म्बर थे सब में कोई न कोई त्रुटि थी। दूसरे महात्मा अपनी कमज़ोरियों को जनता के सामने पेश नहीं करते, मैं कर देता हूँ। क्यों ऐसा करता हूँ ? कि भई एक ग़लती तो मैंने खाई अब उसको छुपाने के लिए दस बातें और क्यों बनाऊँ ? दूसरी बात यह है कि ग़लती करने से मन पर जो बोझ पड़ता है वह ग़लती बता देने से कम हो जाता है। एक और समाज है उसका नाम शायद ब्रह्मसमाज है। वे लोग एक जगह इकट्ठे होकर अपनी-२ ग़लतियाँ बताते हैं। मैं समझता हूँ कि यह अच्छी बात है। अगर तुमसे ग़लती हो जाती है तो अपने मन को समझाया करो ताकि दोबारा फिर यह ग़लती तुमसे न हो। सबसे अच्छी बात यह है कि रात को सोते समय दिन में जो तुम्हारे दिमाग़ में ख्यालात आये हैं उन पर विचार किया करो। अगर उनमें कोई त्रुटि होती है तो कोशिश करो कि वह दोबारा न हो। वाणी में लिखा है कि तुम्हारे जितने भी गन्दे विचार हैं उन्हें गुरु को बता दो। अपनी त्रुटियों को गुरु से मत छुपाओ। इससे गुरु को तुम्हारी प्रकृति की पहचान करने का मौका मिलता है और वो तुमको उसका इलाज बता सकता है।

कई लोग कहते हैं कि गुरु को अपनी त्रुटियाँ बताने की क्या ज़रूरत ! गुरु तो अन्तर्यामी है। अगर गुरु अन्तर्यामी है तो स्वामी जी महाराज ने वाणी में यह क्यों लिखा कि गुरु से अपने ऐब मत छुपाओ। ये सब रोचक और भयानक बातें हैं। अब मैंने महसूस किया है कि गुरुइज्म में अब पाखंड आ गया है। हम गृहस्थी लोग बहुत बेवकूफ हैं। मैं उठा, मैंने दो-चार किताबें पढ़कर और सत्संग करा कर

लोगों को बेवकूफ बनाया, दूसरा उठा उसने बेवकूफ बनाया, तीसरा उठा उसने बेवकूफ बनाया। गुरु तो तुम्हारे अन्दर रहता है। अगर सच्ची बात पूछो परन्तु तुम समझ नहीं सकते। गुरु असल में है कौन ? तुम्हारा अपना आपा ही तुम्हारा गुरु है। देखो जैन साहिब ! तुम हमेशा मेरे पास आते हो और इन्दौर से भी ये लोग आये हुए हैं। मेरे सिर पर भी कोई ज़िम्मेवारी है। मैं तुम्हारी आँखों में मिट्टी डालकर अपना उल्लू सीधा करना नहीं चाहता। हजूर दाता दयाल जी महाराज का एक शब्द है :--

घट में दर्शन पाओगे सन्देह कुछ इसमें नहीं।
मैं तो घट में हूँ तुम्हारे ढूंढ़ लो मुझको वहीं॥
शब्द सुनते हो मेरा अन्तर में चित्त को साध कर।
सुरत मेरा रूप है इसको समझ लेना यहीं॥

मैं हजूर दाता दयाल जी महाराज की तालीम को फैला रहा हूँ। क्या उन्होंने कहीं धोखा दिया ? यह शब्द लिख गये सच्चाई पर परन्तु मेरी तरह उन्होंने ज़बानी नहीं कहा। यह ड्यूटी मेरे ज़िम्मे है। उन्होंने बहुत सच्चाई की बात कही परन्तु इसकी समझ जल्दी आती नहीं। मैं कैसे मानूं कि सिर्फ़ मुझे ही समझ नहीं आई। हमने तो दाता को जट्ट-जफ्फा मारा हुआ था और उस अज्ञान के जफ्फे में बड़ा आनन्द था, बड़ा प्रेम था, खुशी थी और सिद्धिशक्ति थी परन्तु यह आनन्द की अवस्था हमेशा नहीं रहती। वक्त आता है जब यह आनन्द चला जाता है। दाता दयाल जी ने जब चोला छोड़ा तो उससे पहले उन्होंने जो सत्संग दिया उसमें उन्होंने कहा था कि देखो दोस्तो, मैं वह बात कहता हूँ जो किसी ने नहीं कही। क्या ? अज्ञान में आनन्द है ज्ञान में आनन्द नहीं। ज्ञान में शान्ति है परन्तु दुनिया को शान्ति की ज़रूरत नहीं। दुनिया को आनन्द की ज़रूरत है इसलिए

मैं अपनी आत्मा को साफ रखने के लिए ऊँची शिक्षा देता हूँ। आपको चाहिए कि एक जगह विश्वास रखो। मैं नहीं कहता कि मुझ पर रखो। जिस रूप पर विश्वास करते हो उससे अपने अन्दर में प्रेम किया करो और उससे मांगा करो। अगर रूप बना हुआ है तो जो मांगोगे तुम उसमें सफल हो जाओगे यह कुंजी है। बजाय इसके कि तुम मेरे पास दौड़े आओ तुम अपने अन्दर रूप बना लो। उस रूप के आगे प्रार्थना करके मांगा करो सब कुछ मिल जायेगा। रह गया निवृत्तिमार्ग वो तो सिवाय प्रकाश और शब्द के और कोई तरीक़ा उसको प्राप्त करने का नहीं है। आप दुनियादार हैं आपको दुनिया में सुखी रहने का तरीक़ा बता रहा हूँ। उस मालिक का तो कोई रूप नहीं है और सब रूप उसके हैं :—

नहीं रूप तेरा है सब रूप तेरे।
तेरी सब ही परजा हैं और भूप तेरे॥
धरा सन्त अवतार जग को चिताया।
दुःखी दीन को अंग अपने लगाया।
दिया संग सत का मिला सत्त का जीवन।
तेरे नाम पर सीस तन मन हैं अर्पण॥

तो ऐसे किया करो। आगे तो आप जा नहीं सकते, दुनिया चाहते हो तो विश्वास रखो। जहाँ तुम्हारा विश्वास है उसको मानो परन्तु एक को मानो। मैं 1905 में हजूर दाता दयाल जी महाराज की शरण में गया था। मेरा उन पर पूर्ण विश्वास था। "ज़मीं ज़ुम्बद न जुम्बद गुरु मुहम्मद" दुःख उठाये तो और सुख उठाये तो परन्तु मेरा विश्वास नहीं टूटा। तुम लोगों का अगर दुनिया का कोई काम पूरा नहीं होता तो तुम्हारा विश्वास टूट जाता है और तुम रोते हो। मेरा विश्वास कभी नहीं टूटा था। मेरे एक लड़का

हुआ मैंने दाता दयाल को लिखा कि फलाँ तारीख को लड़का हुआ है। उन्होंने उसका नाम रखा और मुझे मुबारकवाद लिख कर भेजी। जिस दिन उनकी चिट्ठी आई दूसरे दिन लड़का मर गया। मेरे दिल में यह ख्याल नहीं आया कि दाता ने नाम भी रखा और लड़का भी मर गया। क्यों? मैंने उन से संसार की इच्छाओं के लिए प्रेम नहीं किया था। मैं तो प्रेम के ख्याल से प्रेम करता था। मुझे लाहौर का एक वाक्या याद है जब अनारकली में आर्य समाज वालों ने उनकी किताबें जला दी थीं क्योंकि उन्होंने राधास्वामी नाम ज़ाहिर किया था। तो आर्य समाज वाले उनके विरुद्ध हो गये थे और उनका सारा सामान और किताबें जला दी थीं। उनका सारा कारोबार ठप्प हो गया। मैनेजर भाग गया, चपरासी भाग गये, सब उनका साथ छोड़ गये। मैंने अखबार में पढ़ा और मैं लाहौर आया। दाता ज़मीन पर अकेले बैठे हुए थे और आँखें बन्द थीं। मैंने मत्था टेका तो आँख खोलकर कहने लगे "बेवकूफ सब मुझे छोड़कर भाग गये, मैं बदनाम हुआ, यह हुआ वो हुआ। तुम क्यों आये हो।" मैंने कहा, महाराज़! ये लोग आये होंगे आपको साधु समझ के, महात्मा समझ के या विद्वान् समझ के। तुम क्यों आये? मैंने कहा, Love for the sake of Love– प्रेम प्रेम के लिए। बस तुरन्त ज़मीन से उठे बाजू फैला दिये और मुझे छाती से लगा लिया। कहने लगे—"फकीर! तेरे साथ ज़िन्दगी निभा दूंगा उन्होंने मेरे साथ ज़िन्दगी निभा दी और मैंने उनकी शिक्षा को फैलाने में अपनी जिन्दगी लगा दी। यह है विश्वास। तुम लोग किसी मतलब के लिए प्रेम करते हो। यह तो लड़के का पैदा होना या मरना या अमीरी या ग़रीबी यह पिछले जन्मों के कर्मों की वजह से है। तुमको क्या कहूँ सन्तों के साथ भी ऐसा होता है। मैंने कल तुमसे

कहा था कि श्री नौनिधराय ज्योतिषी जो दाता दयाल जी महाराज का शिष्य था दाता से कहने लगा कि महाराज, अब पिछली उमर में आपको राहु आ गया। आपका कारोबार समाप्त हो जायेगा। हालात ऐसे बने कि दाता दयाल जी महाराज को धाम छोड़कर जाना पड़ा। तो फिर जब सन्त भी इस चक्र से नहीं बच सकते तो तुम क्यों रोते-पीटते रहते हो। जो होना है वह होकर रहेगा। जो कर्म तुमने किये हुए हैं उनको तो तुम बदल नहीं सकते। जब सन्त अपने कर्मों को बदल नहीं सकते तो तुम्हारे कहाँ से बदलेंगे। सन्त तुमको ज्ञान दे सकते हैं। अगर तुम्हारा विश्वास दृढ़ है तो तुम्हारा विश्वास तुम्हारे कर्म को बदलेगा। किसी गुरु ने तुम्हारे कर्म को नहीं बदलना। तुमको इन गुरुओं ने धोखा दिया। तुम्हारे कर्म को तुमने आप बदलना है। ख़्याल बदल दो 'हो जायेगा' :--

सूक्ष्म हूँ स्थूल हूँ कारण हूँ कारण से परे।
देख दृष्टि को जमाकर अपने अन्तर में कहीं ।।
चाह जब दर्शन की होगी देख लोगे आप तुम।
जागते में सोते में सन्ध्या में मैं हूँ सब कहीं ।।
राधास्वामी धाम में सेवक हूँ राधास्वामी का।
मेल मेला राम ने इसकी परख आई नहीं ।।

मेला राम एक सत्संगी था बसरे-बग़दाद में। वह दाता दयाल जी महाराज को चिट्ठियाँ लिखा करता था। तो वो चिट्ठी का उत्तर देते हैं कि गुरु तो तुम्हारे पास है परन्तु मेला राम को उसकी समझ नहीं है। बस इतनी सी बात है :--

सुरत प्यारी कर सतगुरु का ध्यान।

मैंने तुमको सतगुरु के सारे रूप बता दिये। असली सतगुरु तुम्हारी अपनी ही ज़ात है मगर वहाँ तक तुम पहुँच

नहीं सकते क्योंकि तुम्हारे ऊपर मन है इसलिए पहले सत्संग करो और वो भी किसी कामिल पुरुष का। राधास्वामी मत बार-२ कहता है :--

पूरे गुरु को ढूंढ़ तेरे भले की कहूँ।

पूरा गुरु वह है जो तुमको पूरा ज्ञान दे दे, पूरी समझ दे दे। फिर अपने अन्दर में चलो। अन्दर में एक तो बाहर के गुरु का रूप है जिसने तुमको ज्ञान दिया और दूसरे तुम्हारे अन्दर में गुरु का रूप है शब्द :--

सतगुरु तेरे घट में बसते तू फिरे चारों खान।
भ्रू के मध्य में तिल है तीसरा वहाँ है ठौर ठिकान ।।

यहाँ आकर मन को शान्ति मिलती है। जब तक चित्त की वृत्ति निरोध को प्राप्त नहीं होती शान्ति कहाँ ? मन तो छलांगें लगाता रहेगा :—

जगमग जोत सुनहरी ज्वाला जोत में जोत महान्।

तुम्हारे अन्दर में सुमिरन, ध्यान के बाद में प्रकाश आयेगा। कई आदमी कहते हैं कि हमें प्रकाश नहीं आता। तुम्हारे अन्दर में प्रकाश हो कैसे ? प्रकाश को पैदा करने वाली तुम्हारे मन की ताक़त है। जो आदमी विषयों में ज़्यादा वक्त गुज़ारता है और जिसने वीर्य का नुकसान किया हुआ है वह अगर यह चाहे कि उसके अन्दर में जल्दी प्रकाश आ जाये यह नहीं हो सकता। इसके लिए शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य रखने की बहुत ज़रूरत है। इसका यह मतलब नहीं कि तुम शादीशुदा हो तो औरतों को जवाब दे दो। यह मेरा भाव नहीं है। Live at the desire of your partner-अपने साथी की इच्छा के मुताबिक अपनी ज़िन्दगी गुज़ारो। अगर तुम त्यागी बन जाओगे तो घर में रोज़ झगड़ा होगा और घर में अशान्ति फैल जायेगी। अगर औरत एक काम करना चाहती है और पति नहीं चाहता तो झगड़ा

अवश्य होगा। मैं तो बहुत हद तक बच गया। मेरी पत्नी बहुत नेक थी। मुझे उससे बहुत सुख मिला। तुम गृहस्थी हो घर में ग़लतफहमी पैदा करके अशान्ति मत पैदा करो यह है राज़, यह है कुंजी :—

वह है बिम्ब और तू है प्रतिबिम्ब एक में एक समान।

प्रतिबिम्ब का क्या अर्थ है ? एक है असल और एक है उसकी परछाईं। ज्योति असल है और उसमें से जो मन निकलता है वो उसकी परछाईं है :--

एक में दो का भाव कहाँ है दूजा मिथ्या जान।

मुझको इन शब्दों के अर्थ का पता नहीं लगता था। यह तो सिर्फ़ इस एक ख्याल से कि मैं किसी के अन्दर नहीं जाता मेरी ज़िन्दगी का तख्ता बदल गया। अब मुझे यक़ीन हो गया कि जब तुम लोग मेरा रूप बनाकर उससे काम ले लेते हो मगर मैं महीं होता तो मेरे अन्दर में भी जो कुछ प्रकट होता है वो भी असल में कुछ नहीं, सिर्फ एक ख्याल है और संस्कार है जो मस्तक पर पड़ा हुआ है। संस्कार कैसे पड़े हुए हैं ? मैं हैरान होता हूँ इतना अभ्यासी होने के बाद भी यह तार का महकमा और रेलगाड़ियाँ मुझे स्वप्न में आ जाते हैं। क्यों ? जो कुछ हम देखते हैं और सुनते हैं सब का नक्शा हमारे मस्तिष्क पर आ जाता है। जब हम अन्दर में अकेले होते हैं तो वे नक्शे शकलें बना कर हमारे सामने आयेंगे। मेरे भी आयेंगे, तुम्हारे भी आयेंगे और सन्तों के भी आयेंगे। जब तक तुम इससे ऊपर नहीं जाओगे ये फिल्में चलती ही रहेंगी। जिसको यह ज्ञान हो गया कि ये सिर्फ फिल्में ही हैं असलियत नहीं है तो वह इन फिल्मों का तमाशा तो देखेगा परन्तु इनमें फँसेगा नहीं। काश ! ये महात्मा अपनी-२ रहनी बताते। मैंने हज़ूर बाबा सावन सिंह जी महाराज को तीन रजिस्ट्रियाँ भेजीं। उनमें मैंने लिखा कि मुझे स्वप्न

आते हैं और उनमें रेलगाड़ियाँ आती हैं। आप बताइये क्या आपको स्वप्न आते हैं ? अगर आते हैं तो किस किस्म के आते हैं ? कोई उत्तर नहीं आया।

हम लोग अपने आपको दुर्बल, निकम्मा और पापी समझते हैं। मैं आपको बताऊँ कि मैं मास्टर मोहन लाल के मकान पर सत्संग दे रहा था पाँच संन्यासी भगुए कपड़ों वाले भी बैठे थे। मेंने सत्संग में कहा कि जब मेरी खुराक में कमी-वेशी हो जाती है या मैं कोई ताक़तवर दवा खा लेता हूँ तो एक, दो या तीन साल में मुझे स्वप्नदोष हो जाता है। बात आई और चली गई। वे पाँचों संन्यासी शाम को मेरे घर आये। लेटकर साष्टांग प्रणाम किया। मैं बड़ा शर्मिन्दा हुआ और उनसे कहा आप महात्मा हैं और मैं तो गृहस्थी हूँ। वे कहने लगे कि नहीं महाराज आप धन्य हैं। मैंने पूछा कैसे आये ? तो कहने लगे कि हम देहरादून में थे। वहाँ एक लेफ्टिनेंट कर्नल संन्यासी बना हुआ है। उसने हमें बताया कि मैंने सारे भारत का चक्कर लगाया। मुझे सिर्फ एक सच्चाई-पसन्द इन्सान मिला जो गृहस्थी है और आपका नाम बताया। तो हम एक संन्यासी के मुँह से एक गृहस्थी का नाम सुनकर बहुत हैरान हुए। यहाँ आये तो पता लगा कि आज इतवार को आपका सत्संग है। आपने स्वप्नदोष के बारे में बताया। हम संन्यासी बने हुए हैं हमको भी यही बीमारी है। मैंने कहा यह हर एक आदमी के साथ होता है। पुराने संस्कारों को भूल जाना चाहिए। जो अच्छे या बुरे संस्कार पड़े हुए हैं वो तो ज़रूर आयेंगे। इसलिए सन्त कहते हैं कि तुम मन के दायरे से निकलने की कोशिश करो। अपना इष्ट प्रकाश और शब्द रखो। जो आदमी राम के रूप को, फकीरचन्द के रूप को, बाबा सावन सिंह जी महाराज के रूप को या किसी देहधारी गुरु के रूप को इष्ट मानता है वह अगर यह चाहे

कि उसके कर्म का जाल कट जाये यह नहीं हो सकता। मैं यह इसलिए कहता हूँ कि लोग ग़लती से सारी ज़िन्दगी इस चेहरे को या दाढ़ी को ही न देखते रहें. इससे तुमको ऋद्धि-सिद्धि मिल जायेंगी, दुनिया के काम हो जायेंगे मगर वो जो दिमाग पर पुराने संस्कार पड़े हुए हैं वे ज़ाया नहीं होंगे। समझ गए ज्ञानचन्दानी ! रामजी दास !! आप लोग समझते हैं दुर्गादास और घई ? मैं अपनी आत्मा को साफ रखकर जाना चाहता हूँ ताकि मुझ पर गुरु बनने का कोई पाप न रहे। मैंने सच्ची बात बता दी। तुम नहीं कर सकते न करो मुझे क्या देखो मैं एक बात बताता हूँ बुरा न मानना। एक आदमी कृष्ण जी का ध्यान करता है उसके दिमाग में वो कृष्ण हैं जिसने गोपियों के साथ रासलीला की और जिसकी तीन सौ साठ रानियाँ थीं। अगर वह यह ख़्याल करे कि मैं कृष्ण जी का ध्यान करता हुआ अपने काम को रोक सकूँ तो वह नहीं रोक सकता। दो आदमी मेरे सामने बैठे हुए थे उनमें एक महतपुर का ज्योतिषी था। उनको बहुत गुस्सा लगा। मैंने कहा कि तुम यह बताओ कि क्या तुम कृष्ण जी के उपासक हो ? उन्होंने कहा, जी हाँ। एक और आदमी यहाँ का रहने वाला गंगाराम था। मैंने उससे कहा कि तुम क्या करते रहे हो ? उसने कहा कि मैं घुँघरू बाँध कर नाचा करता था और धोती ढीली बाँधता था ताकि नाचते-नाचते नीचे गिर जाये। मैंने कहा कि फिर क्या मैं झूठ बोलता हूँ ? इसलिए कहा गया है :--

गुरु को मानुष जानते ते नर कहिये अन्ध।
दुःखी होयँ संसार में आगे यम का फन्द॥

कबीर साहिब ने भी और दूसरे सन्तों ने भी यही कहा। गुरु को अगर तुम फकीरचन्द मानते हो तो मैंने तो शादी

भी की; बच्चे भी पैदा किये। तुम्हारा बेड़ा परमार्थ के लिए पार नहीं हो सकता। मैं सच्ची बात बता रहा हूँ। तुम्हारा जी चाहे मेरे सत्संग में आओ न चाहे तो मत आओ। अगर तुम समझते हो कि मैं सच्चाई पर हूँ तो जो मदद तुम मन्दिर की करना चाहो मैं खुशी से स्वीकार करूंगा। अगर नहीं देना चाहते तो मत दो। मैं झूठ बोल कर तुमको अपने जाल में फँसाना नहीं चाहता।

सबको राधास्वामी !

---

(1) माली वृक्ष की जड़ में पानी देता रहता है और सारा वृक्ष हरा-भरा नज़र आता है। कारण यह है कि जल में एकपना है और डालियों और पत्तों में अनेकपना है।

(2) दुनिया एक गुलदस्ता के समान है। गुलदस्ते में फूल, कलियाँ, पत्ते और काँटे सब ही होते हैं परन्तु वो अच्छी प्रकार से लगाये हुए होते हैं इसलिए गुलदस्ता सुन्दर नज़र आता है। संसार की अवस्था भी यही है। बुराई-भलाई, नेकी-बदी, बेगर्ज़ी और खुदगर्ज़ी एक दूसरे से जुड़े हुए हैं फिर किसी की शिकायत क्यों की जाये।

(3) प्रकृति में कोई भी वस्तु बेकार और फालतू नहीं है। प्रकृति का इन्तज़ाम बिलकुल मुकम्मल है। यहाँ कोई भी चीज़ गैर-ज़रूरी या फालतू नहीं है। क्या तुम नहीं देखते कि जब कोई चीज़ सड़ जाती है या गल जाती है तो प्रकृति की सारी शक्तियाँ मिलकर अपने में मिला देती हैं और फिर उसकी हस्ती तक भी नहीं रहने पाती।

—दाता दयाल

सत्संग परमसन्त
हजूर मानव दयाल जी महाराज
अहेरी
30 - 12 - 1985

तू फकीर है मेरे प्यारे, सुन फकीर की बानी ।
साधु कहें फकीर को भाई, साधु जग सुखदानी ।।
परउपकारी जन हितकारी, गुरु के आज्ञाकारी ।
अवगुन त्यागी गुन के ग्राही, दया भाव चितधारी ।।
निजचित सोधें मन परबोधें, जीव दोष नहीं दृष्टि ।
अपने भाव में बरतें निसदिन, करें दया की दृष्टि ।।
मोह माया और छल चतुराई, छोड़ें मूल विकारा ।
पर हितलागी सहज विरागी, ज्ञान बुद्धि भंडारा ।।
दु:ख कलेश सह अपने सिर पर, जीव का करें सुधारा ।
भव दु:ख भंजन काम निकन्दन, यम से दें छुटकारा ।।
धर कपास की गति विमलचित, निरस विशुद्ध कहायें ।
सहें विपत्ति कठिनाई जग की, और का दोष छुपायें ।।
सरल स्वभाव रहें जग माहीं, अपना रूप सँभारें ।
औरन के अवगुण नहीं देखें, दया का मर्म विचारें ।।
सुख देवें दु:ख हरें निरन्तर, छमा करें अपराधा ।
हँसी खुशी आनन्द प्रेम गति, अगम अलेख अबाधा ।।

नाम फकीर धराया तूने, हो फकीर अब साँचा।
जैसा नाम तो गुण भी वैसा, मन कर्म सहित सुबाचा॥
है फकीर का नाम पियारा, मैं फकीर का दासा।
तन मन धन फकीर पर वारूँ, बसूं सुसंग सुबासा॥
कठिन नाम है कठिन काम है, कठिन फकीर कमाई।
जग के भव दुःख नासें पल में, जब फकीर जग आई॥
जो फकीर मोहे दरशन देवे. अपना भाग सराहूँ।
अपने तन के चाम की जूती, पग फकीर पहनाऊँ॥
मैं नहीं राम कृष्ण का सेवक, ईश ब्रह्म नहीं जानूं।
मैं फकीर का नाम दिवाना, सब से बढ़कर मानूं॥
मेरे साध हैं शब्द विवेकी, सन्तवंशकुल शोभा।
चरन कमल मस्तक पर धारूं, प्रेम मगन मन छोबा॥
एक घड़ी साधु की संगत, कटे मोह यम फांसी।
मेरी नज़र में साधू फकीरा, सत चित आनन्द रासी॥
जो फकीर का दर्शन पाऊँ, चरन सरोज परवारूँ।
आप तरूं उसकी शरनाई, औरों को संग तारूँ॥
साधु की संगत गुरु की सेवा, सहज ही काम बनावे।
जिस पर साध की दृष्टि पड़ गई, फिर जग योनि न आवे॥
तरवर सरवर मेघ का पानी, औरों को सुखकारी।
तैसे ही सुन मेरे फकीरा, साधु परउपकारी॥
तू फकीर बन तू फकीर बन, तू फकीर बन भाई।
मैं भी तरूँ फकीर चरन लग, ऐ फकीर! सुखदाई॥
सुन ले कथा सुनाऊँ तुझको, प्रगटे विमल विवेका।
जीव अनेक रहें जग अन्दर, पर फकीर कोई एका॥

राधास्वामी!

मेरी अपनी ही आत्मा के स्वरूप सत्संगी भाईयो और बहनो, इस सत्संग की प्रथा के अनुसार पहले शब्द पढ़ा जाता है फिर उस शब्द के आधार पर सत्संग दिया जाता

है। श्री श्यामराव जी ने आपको बताया कि परमदयाल जी के सम्पर्क में आने पर किस प्रकार इनका भ्रम दूर हुआ। जब मनुष्य का भ्रम दूर हो जाता है तब समझ में आ जाता है कि जो सभी जीव हैं परमतत्त्व के अंश हैं। इसलिए सबसे पहले मैंने आपको राधास्वामी कहा और आपको परमतत्त्व का आत्मस्वरूप माना। भाग्य माता जी ने आपको धन्यवाद दिया। आपके प्रेम को देखकर उनकी आँखों में आँसू आ गये। प्रेम ही उस परमतत्त्व का बाहरी बहाव है। प्रेम निरन्तर बहता रहता है। यह एक ध्रुव सत्य है कि जो परमतत्त्व को समझता है और अपने में परमतत्त्व का ज्ञान रखता है उसे सत्तपुरुष कहते हैं। उसी सत्तपुरुष के सम्पर्क से आपके सभी कष्ट तथा भव के सभी दुःख दूर हो जाते हैं। यह क़ुदरत का कानून है।

एक बार नारद मुनि विष्णु भगवान् के पास बैकुण्ठ में गये और कहने लगे "महाराज मुझे यह बताइये कि सत्तपुरुष जिसे सन्त कहते हैं, फकीर कहते हैं के मिलने से या उसकी दृष्टि से क्या लाभ होता है?" विष्णु भगवान् ने कहा "नारद! फलाने जंगल में चले जाओ वहाँ एक कौए का घोंसला है। वहाँ पर तुम्हें सवाल का जवाब मिल जायेगा।" नारद मुनि उस जंगल में गये। उन्होंने देखा कि कौए के घोंसले में अण्डा है और उस अण्डे से बच्चा निकला। जैसे ही उस बच्चे पर नारद की दृष्टि पड़ी कि बच्चा मर गया। नारद मुनि विष्णु भगवान् के पास गये और कहने लगे "महाराज मेरे सवाल का जवाब तो मिला नहीं जैसे ही मेरी दृष्टि उस कौए के बच्चे पर पड़ी कि वह मर गया।" विष्णु भगवान् ने कहा "नारद! फलाने जंगल में मानसरोवर झील के किनारे एक हंस का जोड़ा रहता है वहाँ चले जाओ। तुम्हें सवाल का जवाब मिल जायेगा।

नारद मुनि उस झील के किनारे गये। उन्होंने देखा कि हंसनी का अंडा फटा और उससे नया हंस पैदा हुआ। जैसे ही नारद की दृष्टि उस नये हंस पर पड़ी कि वह मर गया। नारद बिष्णु भगवान् के पास गये और कहा, महाराज मेरे सवाल का जवाब तो आप दे नहीं रहे हैं। विष्णु भगवान् ने कहा "नारद फलाने गाँव में एक ब्राह्मण रहता है। उसकी गाय बच्चा देने वाली है तुम उस ब्राह्मण के घर चले जाओ।" नारद मुनि उस ब्राह्मण के घर गये। ब्राह्मण ने नारद मुनि का बड़ा सत्कार किय। उस ब्राह्मण का लड़का भागता हुआ आया और बोला पिता जी, जल्दी चलिये गाय बच्चा दे रही है। ब्राह्मण और नारद मुनि गाय के पास पहुँचे। जैसे ही नारद मुनि की दृष्टि उस बछड़े पर पड़ी कि वह नया बछड़ा मर गया। नारद मुनि विष्णु भगवान् के पास गये और कहने लगे "महाराज, आप मुझसे ही मज़ाक करते हैं। कभी मुझे बन्दर का रूप देते हैं, कभी किसी का रूप देते हैं। मुझे मेरे सवाल का जवाब दीजिये।" विष्णु भगवान् कहने लगे "नारद तुम्हें तुम्हारे सवाल का काफी कुछ जवाब मिल गया है, अब तुम काशी नगरी में चले जाओ, वहाँ राजा के घर एक पुत्र पैदा हुआ है वह तुम्हें सवाल का जवाब देगा।" नारद मुनि कहने लगे महाराज, वहाँ तो मैं जाऊंगा नहीं, यदि राजा का लड़का मेरे देखने मात्र में मर गया तो वह मुझे फाँसी पर चढ़ा देगा। विष्णु भगवान् ने कहा "नहीं नारद तुम जाओ इस बार तुम्हारे सवाल का जवाब अवश्य मिलेगा।" नारद मुनि राजा के घर गये। राजा ने नारद मुनि का बड़ा सत्कार किया। नारद ने कहा राजन् ! मैं आपके बच्चे से दो बात करना चाहता हूँ। राजा उस बच्चे को ले आये। बच्चा नारद मुनि को देखते ही बोला, क्यों नारद आप अब भी नहीं समझे कि

सत्तपुरुष की दृष्टि से क्या लाभ होता है ? अरे ! पहले मैं कौआ बना जब आपकी दृष्टि पड़ी तो मैं हंस बना, फिर आपकी दृष्टि से बछड़ा बना और अब मैं राजकुमार बना हूँ। तो यह है सन्त की दृष्टि। सन्त के मिलने से, सत्तगुरु के पास बैठने से क्या होता है ? आपके सारे पिछले कर्म कटते चले जाते हैं। इसीलिए मैंने कहा :—

वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररूपिणम् ।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते ।।

असल में बात क्या है ? कि आप गुरु को शरीर मान लेते हैं। गुरु शरीरधारी जरूर है मगर शरीर भी समय आने पर आनन्दमय हो जाता है। इसमें कोई शक नहीं कि सत्, चित्, आनन्द हो जाता है। परमदयाल जी महाराज परम-तत्त्व के अवतार थे। मैंने कहा "परमतत्त्वस्य अवतारं" परमतत्त्व के अवतार और 'दातादयालस्य प्रियतमम्' दाता दयाल जी के प्रिय; 'मानवस्य परमिष्टं फकीरं वन्दे जगद्-गुरुम्' मैंने उनको ऐसा क्यों कहा ? क्योंकि मैंने उनको देखा; मैंने अनुभव किया कि वह जो कुछ करते थे, या कहते थे वैसे ही होता था। जैसे राम और कृष्ण के दर्शन से लोगों को लाभ होता था वैसे ही सन्त के दर्शन से भी लाभ होता है।

एक बार कश्मीर में निर्मला नाम की एक औरत डूबने लगी, उसने फकीर बाबा को पुकारा। फकीर बाबा प्रकट हुए और उसको बचा लिया और कहा अभी तुझे बहुत काम करने हैं। अब वह स्त्री महाराज जी के पास आई और कहने लगी "महाराज जी ! मैं डूबने लगी थी आपने बचा लिया और कहा कि अभी तुझे बहुत काम करने हैं।" महाराज जी ने कहा कि मैं तो गया नहीं। तेरे विश्वास से मेरा रूप प्रकट हुआ और उस रूप ने तुझे बचा लिया। इसी तरह से

हज़ारों मिसालें हैं जिनमें उनका रूप प्रकट होता था। मेरी बहन कृष्णा का ड्राईवर महाराज जी का फोटो अपनी जेब में रखता था। एक बार वह दूसरे की गाड़ी चला रहा था कि एक दम गाड़ी पलट गई। महाराज जी का रूप प्रकट हुआ और कहा कि हरिशंकर बाहर निकल जा, इस गाड़ी में आग लगने वाली है। हरिशंकर ने कहा कि महाराज मैं तो निकल नहीं सकता आप ही निकालें। महाराज जी ने उसे निकाला। हरिशंकर के बाहर आते ही गाड़ी को आग लग गई। वहाँ एक पुलिस वाला खड़ा था उसने हरिशंकर को कहा कि तुम ग़लत साइड पर गाड़ी चला रहे थे और उसे जेल में बन्द कर दिया। हरिशंकर रात भर महाराज जी की फोटो के आगे कहता रहा कि बाबा! मुझे बचाओ। सुबह आठ बजे पुलिस कप्तान आया और उसने कहा कि क्या कल तुमने हरिशंकर नाम के आदमी को पकड़ा है? उसे छोड़ दो, वह बेकसूर है। उस अफसर से पूछा गया कि आपको यह कैसे पता चला कि हरिशंकर बेकसूर है? अफसर ने कहा कि रात को स्वप्न में एक दाढ़ी वाला बाबा आया उसने कहा कि हरिशंकर बेकसूर है उसे छोड़ दो वरना तुम्हारा अनिष्ट हो जायेगा। इन सभी बातों को सुनकर महाराज जी ने कहा कि मैं नहीं जाता। उन्होंने यह सच्चाई उन दुःखियों को ज्ञान देने के लिए दी जो भटक रहे हैं और गुरु को शरीर मान रहे हैं। यदि उनके गुरु का या इष्ट का रूप प्रकट हो गया तो वह लोग समझते हैं कि वही इष्ट प्रकट हो गया और वही सब कुछ है। जिसको राम का या कृष्ण का रूप प्रकट होता है वह सचमुच में न राम है न कृष्ण है। राम या कृष्ण पर जो विश्वास करता है उसके सामने राम के रूप में या कृष्ण के रूप में, गुरु के रूप में ब्रह्माण्डी मन आ जाता है। यदि इस बात को दुनिया समझ

ले तो आपस के झगड़े समाप्त हो जायें। दुनिया में जो दुःख हैं, कष्ट हैं वह धर्मों के परस्पर टकराव के कारण हैं लेकिन धर्मों का परस्पर टकराव ग़लत आधार पर है। अब देखो, मुसलमान कहता है कि मुहम्मद ही एक सच्चा है। ईसाई कहता है कि जीजस क्राइस्ट ही सच्चा है जबकि हिन्दु धर्म में ऐसा नहीं है। भगवान् कृष्ण ने कहा है :—

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।

"जो जैसे मुझे भजता है; जिस रूप में मुझे देखना चाहता है मैं वैसे ही रूप में उसके पास प्रकट होता हूँ।" कृष्ण ने आगे कहा कि जो लोग देवताओं की पूजा करते हैं जैसे ब्रह्मा की या अन्य देवताओं की, तो मैं उन देवताओं के ज़रिया उनकी इच्छाओं को पूरा करके उनके विश्वास को दृढ़ करता हूँ। ये सभी देवता प्रकाश से निकले हैं। भगवान् कृष्ण परमतत्त्व के अवतार थे। प्रकाश भी उनके साथ था और शब्द भी उनके साथ था। उन्होंने अवतार लिया। जो परमतत्त्व का अवतार होता है वह देवी-देवता, ईश्वर-परमेश्वर से ऊपर होता है। कल मैंने आपको फकीर की मिसाल दी थी कृष्ण तत्त्व या फकीर तत्त्व एक ही बात है। फकीर सबसे ऊँचा होता है। चूंकि यह तो उसी परमतत्त्व से निकली धारें हैं और वह आधार जब खुद आता है तो उसके अन्दर परमदया होती है जो निरन्तर बहती रहती है। यही कारण है कि महाराज जी ने सच्चाई बयान की क्योंकि दुनिया टुकड़ों में ग़लतफहमी के कारण बँट गई। कोई शिव का भक्त हो गया, कोई जैनी हो गया, कोई देवी का भक्त हो गया। अरे! मालिक तो एक है और उसने आकर के बार-२ कहा कि जो मुझे सबमें देखता है और सबको मुझमें देखता है वही मेरा भक्त है। मालिक सबके अन्दर मौजूद है। आप भूल जाते हो और उसे इन्सान

समझने लगते हो और यदि गुरु को इन्सान समझते हो तो और भी ज़्यादा भूल करते हो।

यह बात समझनी है कि मालिक का अंश हमारे अन्दर है और हम सब उसी के अन्दर ठहरे हुए हैं, उसी से हमारा पालन-पोषण होता है, उसी से हमारे शरीर, मन और आत्मा को शान्ति मिलती है। यदि इस बात का ज्ञान हो जाये कि मेरा अंश सभी प्राणियों में है तो आपस में नफ़रत नहीं होगी। अगर तुम किसी से नफ़रत करते हो तो मालिक से नफ़रत करते हो। इस बात को दुनिया भूल गई और आपस में नफ़रत, द्वेष, घृणा करने लगी और आपस में बँट गई। परमदयाल जी महाराज ने बताया कि जिस रूप को तुम मानते हो वह रूप परमतत्त्व नहीं है उसका एक अंश मात्र है और तुम्हारी श्रद्धा और विश्वास के मुताबिक प्रकट होता है। भगवान् कृष्ण ने भी कहा कि जो जिस शरीर या देवता की पूजा करता है उसी से मैं उसकी इच्छा पूरी करता हूं। हमारे मुल्तान शहर में हनुमान जी का मन्दिर था। मैं बचपन में वहाँ जाकर कहता था कि हनुमान जी मेरी यह इच्छा पूरी हो जाये, मैं पाँच पैसे का प्रसाद चढ़ाऊंगा और मेरी इच्छा पूरी हो जाती थी लेकिन उस समय भी मुझे यह आभास होता था कि इच्छा इसलिए पूरी होती है कि मेरा विश्वास मन में था और मन ब्रह्माण्डी मन या हनुमान जी से टकराकर मेरे पास आता है और मेरी इच्छा पूरी हो जाती है। परमदयाल जी ने यह सच्चाई इसलिए बयान की कि कहीं तुम धोखे में न आ जाओ। यदि तुम गुरु को शरीर मानकर बैठे हो और गुरु कहता है कि मेरा शरीर प्रकट हुआ तो इसका मतलब है कि गुरु धोखा दे रहा है। इस बात से क्या होता है कि शिष्य का लगाव गुरु के शरीर से होता है गुरु की आत्मा या गुरु के परमतत्त्व से नहीं होता।

भगवद्गीता के अनुसार मरते समय जो इच्छा होती है उसी के मुताबिक तुम्हारा जन्म होता है। यदि गुरु को शरीरधारी मानोगे या किसी स्थूल चीज़ से तुम्हारा लगाव है तो तुम नीचे अवश्य आओगे क्योंकि यह जगत् भी स्थूल है। मैं आपको इसकी एक मिसाल अपनी बताता हूँ जब मैं 18 वर्ष का था।

मैं एक लड़कियों के कालिज में पढ़ाता था। उस कालिज में मेरी बहन भी पढ़ती थी। मेरे एक मित्र के पिता थे जो आत्मा को बुलाते थे। उनका क्या तरीक़ा था कि एक घड़े को उल्टा करके एक काला निशान बीच में लगा देते थे। चार-पाँच आदमियों को बिठा देते थे। उन आदमियों के हाथ आपस में जुड़े होते थे। वह कहते थे कि क्या आत्मा तू आ गई ? तो मटका हिलने लगता था और घमने लगता था। फिर वह कहते थे कि यदि तू अच्छी आत्मा है तो तीन ठोकरें लगा वरना दो लगा और मटका तीन ठोकरें लगाता था। वह और भी सवाल पूछते थे। यह काम मैंने उनसे सीखा। एक दिन कालिज की छात्राओं ने कहा कि आप हमें भी तमाशा दिखाओ। हमने हाथ रखकर के उस मटके से पूछा और बड़ा अच्छा जवाब आया। मेरी छोटी बहन उस समय 8 साल की थी। मैंने घड़े पर आत्मा को बुलाया घड़ा बड़ी ज़ोर-2 से चल रहा था। मैंने सोचा कि आत्मा जब मटके पर आ सकती है तो कहीं और भी आ सकती है। मैंने कहा कि यदि तू सचमुच आत्मा है तो मेज़ में आ जा। आत्मा मेज़ में आ गई और मेज़ उठने लगी और ठोकरें लगाने लगी। सवालों के जवाब आने लगे। मैंने फिर सोचा कि यदि आत्मा मेज़ में आ सकती है तो किसी के हाथ में भी आ सकती है और लिख सकती है। मैंने कहा कि आत्मा तू किसी के हाथ में आ जा मगर किसके

हाथ में आयेगी ? मेज़ मेरी बहन की तरफ खड़ी हो गई। मैंने बहन के हाथ में पैन्सिल और कापी लाकर दे दी। वह आत्मा मेरी बहन के हाथ में आ गई। उस आत्मा ने लिखना शुरू कर दिया। मैंने कहा तुम्हारा नाम क्या है ? और उसने लिखा कि मेरा नाम रामचन्द्र है। मैं जीवित आत्मा हूँ। इस समय मैं हिमालय में तपस्या कर रहा हूँ। मैं आपको सात साल की उमर से जानता हूँ। मैंने उस आत्मा से कहा कि क्या तुम हमारी नानी से बात करवा सकते हो ? उसने लिखा कि तुम्हारी नानी आ गई हैं और पास खड़ी हैं। नानी की आत्मा ने हमारे घर में रखी हुई वह चीजें बताई जो किसी को मालूम नहीं थीं।

अब मैंने शमीम अख्तर की आत्मा को बुलाया। यह लड़की S.P. की बेटी थी। मेरी छात्रा थी। उमर में मुझसे बड़ी थी। इस लड़की का बवासीर का औपरेशन हुआ और यह मर गई थी। इस लड़की की मां ने मुझे बताया कि मरते समय शमीम अख्तर ने आप ही का नाम लिया था। जब मैंने शमीम अख्तर की आत्मा को बुलाया तो उसकी आत्मा आ गई। उसने लिखा भाई साहिब ! मैं आपकी बहुत आभारी हूँ। आपने कहा था भगवद्गीता के मुताबिक कि आखिर में जैसा विचार होता है उसके मुताबिक मरने के बाद आगे जगह मिलती है। वह मुझे मिल गई। मैं एक ऐसी जगह पर बैठी हुई हूँ जहाँ पर मैं खुदा की परस्तिश कर रही हूँ। यहाँ आनन्द है, दुःख नहीं है और हम खुदा को याद कर रहे हैं। मैंने कहा तू मुसलमान है मगर हिन्दु, सिक्ख आदि कहाँ पर हैं ? उसने लिखा कि सभी लोग हैं और अपनी-2 जगह पर सब पूजा कर रहे हैं। यह स्थान मनोमयकोष है। यहाँ पर किसी भी प्रकार का झगड़ा नहीं है, द्वेष नहीं है, नफ़रत नहीं है। सभी जानते हैं कि मालिक

एक है मगर उसके रूप अनेक हैं [redacted] एक मामूली सी मिसाल दो कि जब एक आदमी पुलिस की वर्दी पहन लेता है तो वह पुलिस का अफसर दिखाई देता है। जब वही आदमी रेलवे गार्ड की वर्दी पहन लेता है तो गार्ड दिखाई देता है। इसी प्रकार खुदा है। उसने लिखा कि यह बिलकुल सही बात है कि जैसी मति वैसी गति, और उसके मुताबिक फिर जन्म लेता है। आश्चर्य की बात तो यह है कि शमीम अख्तर की आत्मा ने उर्दू में लिखा जबकि मेरी बहन उर्दू नहीं जानती थी।

इस प्रकार मैं छोटी आयु में इन अनुभवों से गुजर चुका हूँ। बहुत सी ऐसी चीजें हैं जो साक्षात् सही उतरती हैं। जो हालत आखिर में होती है उसके मुताबिक मनुष्य को जगह मिलती है। इसलिए यदि किसी ने शरीर को गुरु माना हुआ है तो वह जब मरेगा तो शरीर वाली जगह पर जायेगा, ऊपर नहीं जायेगा। महाराज जी ने कहा "जो गुरु यह नहीं बताते कि मैं नहीं गया और झूठ बोलते हैं कि मेरा शरीर गया और उसने तेरी मदद की तो क्या होगा? शिष्य तो जन्म लेगा ही क्योंकि उसने गुरु को स्थूल माना है मगर गुरु को भी जन्म लेना पड़ेगा क्योंकि उसने यह नहीं बताया कि वह नहीं गया था। चाहे गुरु की कितनी भी ऊँची अवस्था क्यों न हो लेकिन उसे जन्म लेना पड़ेगा। यह बात दूसरी है कि मन के ज़रिया किसी को विचार भेज दिया जाये।

इसीलिए महाराज जी ने कहा कि मैं तो सच बोल चुका। मैं तो नीचे आऊंगा नहीं। यह उनका सच्चाई का डेरा है और मैं भी उनकी आज्ञा का पालन उसी सच्चाई के साथ कर रहा हूँ। पहले महाराज जी का रूप प्रकट होता था अब लोगों को मेरा रूप प्रकट होता है मुझे तो मालूम

नहीं । [illegible] नसिक रूप मानते हैं ... रूप आपकी शक्ति है और मानसिक शक्ति आपको सहायता देगी । इसमें विश्वास बढ़ता है घटता नहीं है । क्यों ? क्योंकि जिसको आप प्रेम करते हो तो आपको यह पता चल जाता है कि उसके मन की क्या दशा है । जब आपको शरीर मानकर या मन मानकर इतना लाभ हुआ तो जब आप उसको परमतत्त्व मानोगे तो आपको कितना अधिक लाभ होगा ! इसलिए बार-2 कहा जाता है कि गुरु परमतत्त्व है, परमतत्त्व हैं, परमतत्त्व है । वास्तव में गुरु परमतत्त्व सत्तपुरुष हैं मगर इसके ग्राहक नहीं हैं । ज़्यादा ग्राहक वे मिलते हैं जो शरीर और मन को प्यार करते हैं । इसलिए मैंने कहा :—

बन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररूपिणम् ।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते ।।

बोधमयं अर्थात् उस गुरु को नमस्कार जो ज्ञान से परे होते हुए भी जाना जा सकता है और जो नित्य है, हमेशा रहने वाला है । कबीर साहिब ने कहा है :—

"गुरु किया हैं देह को सतगुरु चीन्हा नाहिं ।
कहें कबीर ता दास को तीन ताप भरमाहिं ।।"

जो गुरु के शरीर को ही सब कुछ माने बैठा है और जो असली गुरु के परमतत्त्व भाव को नहीं समझता, न गुरु की आज्ञा का पालन करता है तो उसे तीन ताप भरमायेंगे । वह तीन ताप हैं (1) शरीर का कष्ट अर्थात् रोग (2) मन का शोक अर्थात् मानसिक रोग (3) आत्मा का अज्ञान अर्थात् मौत से डरना । जबकि मौत कुछ नहीं है । यदि गुरु को परमतत्त्व मान लिया तो आपको तीन ताप नहीं भरमायेंगे । ऐसी गुरु की या फकीर की महिमा है । ऐसे फकीर का शरीर भी परिवर्तित हो जाता है जब वह सच्चाई

बयान करता है। अगर वह कहता है कि मैं तो नीचे आऊंगा नहीं, अब वह तो नीचे आयेगा नहीं और यदि आपको उसके शरीर का भी ध्यान है तो आप भी ऊपर ही जाओगे। फकीर के लक्षण क्या हैं ? दाता दयाल जी ने अपने शिष्य परमदयाल जी के बारे लिखा :—

तू फकीर है मेरे प्यारे सुन फकीर की बानी।
साधु कहें फकीर को भाई साधु जग सुखदानी ॥

एक तो परमतत्त्वाधार दाता दयाल जी महाराज स्वयं फकीर थे और वह स्वयं परमदयाल जी महाराज से कह रहे हैं कि तू फकीर की वाणी को सुन, तू फकीर की व्याख्या को सुन। साधु जग को सुख देने के लिए आता है। तुम्हारे शरीर को रोग से मुक्त करने आता है। यह जगत् क्या है ? शरीर, मन और आत्मा। उसकी दृष्टि से शरीर भी ठीक होता है, आपका मानसिक रोग भी दूर हो सकता है और आपकी आत्मा भी जागृत हो जाती है :—

परउपकारी जनहितकारी गुरु के आज्ञाकारी।

फकीर कैसे बना ? फकीर का दर्जा कब मिलता है ? परोपकार करने से, दूसरों के प्रति दया रखने से, दूसरों की भलाई करने से फकीर का दर्जा मिलता है। परोपकार करने से, दूसरों के प्रति दया रखने से, दूसरों की भलाई करने से फकीर का दर्जा मिलता है। परोपकार का यह अर्थ नहीं कि आपने धर्मशाला बनवा दी, नल लगवा दिये, हस्पताल बनवा दिये। परोपकार यह है कि आप मनुष्य को मनुष्य मानकर उससे प्यार करो, किसी से नफ़रत मत करो। जब दूसरों से प्यार करोगे तो भलाई भी करोगे। लोग कहते हैं मैं बड़ा बन जाऊँ, मेरी इज़्ज़त हो जाये। बात क्या है कि हानि, लाभ, निन्दा, स्तुति, प्रशंसा यह सब प्रारब्ध कर्मों के कारण होती है। लेकिन ज़्यादा प्रशंसा या इज़्ज़त कब होती है जब दूसरों की निःस्वार्थ सेवा करोगे। निःस्वार्थ सेवा से आपका भला तथा आपका

नाम अपने आप हो जाता है। मैं अपना अनुभव बताता हूँ। मैं लैक्चरर था। यह मेरा स्वभाव था कि किसी भी दुःखी या गरीब आदमी के काम के लिए चला जाता था। मेरे दोस्त मिनिस्टर थे। मैं उनके पास अपने काम के लिए कभी नहीं गया। दूसरों के काम के लिए जाता था। मिनिस्टर स्वयं हैरान होते थे। मेरी इज़्ज़त करते थे। अब मैं देखता हूँ कि इन बातों के कारण मेरा नाम भी हुआ और मेरे जितने भी काम थे वह अपने आप बनते चले गये। यह सौभाग्य कब मिलता है जब कोई व्यक्ति फकीर की शरण में आ जाये और फकीर उसे अपना बना लें। ये शायद मेरे पिछले संस्कार थे :—

परउपकारी जनहितकारी गुरु के आज्ञाकारी।

दूसरों के लिए हित करना ही धर्म है। तुलसी दास जी ने कहा :—

परहित सरिस धर्म नहीं भाई।
पर पीड़ा सम नहीं अधमाई॥

अब सोचो क्या चीज़ धर्स है और क्या चीज़ अधर्म है? अपने आप में क्या सिग्रेट पीना या शराब पीना अधर्म है? लेकिन जब कोई भी कर्म ऐसा किया जाये जो दूसरों को हानि पहुँचाने वाला हो तो वह अथर्म है। सिग्रेट पीना खराब नहीं है लेकिन चोरी से सिग्रेट पीना अधर्म है। इसी प्रकार शराब पीकर मारपीट करना अधर्म है। वैसे शराब और सिग्रेट से आपका स्वास्थ्य खराब हो जाता है। दूसरों को पीड़ा न देना ही धर्म है :—

परउपकारी जनहितकारी गुरु के आज्ञाकारी।

इस लक्षण में 'गुरु के आज्ञाकारी' शब्द आया है जो बहुत महत्त्व रखता है। गुरु के सम्पर्क से व्यक्ति परिवर्तित हो जाता है। तुलसी दास जी ने भी कहा है 'पारस के स्पर्श से

लोहा सोना बन जाता है'। पारस तो लोहे को सोना ही बनाता है लेकिन गुरु शिष्य को अपने जैसा बना लेता है लेकिन गुरु की शारीरिक सेवा ज़रूरी है। अब सोचो क्या गुरु को सेवा की ज़रूरत है या किसी चीज़ की ज़रूरत है ? गुरु को किसी भी चीज़ की ज़रूरत नहीं है। परमदयाल जी महाराज ने अपने गुरु दाता दयाल जी महाराज की इतनी सेवा की, जिसकी कोई मिसाल नहीं है। लेकिन असली सेवा क्या है ? असली सेवा है गुरु का आज्ञाकारी होना। गुरु ने आपको जो ज्ञान दिया है, उसने आपको जो रास्ता दिखाया है उस रास्ते पर चलना और अमल करना यह गुरु का आज्ञाकारी होने का सबूत है।

महाराज जी के सम्पर्क में आने से पहले मैंने उनका रूप देखा था। मैं 1959 में जोधपुर विश्वविद्यालय में पढ़ाता था। उस समय एक रात स्वप्न में एक दृश्य आया। उस दृश्य में मैंने एक दाढ़ी वाले महान् पुरुष को देखा। उस महान् पुरुष ने कहा "I. C. Sharma तेरा यह आखिरी जन्म है और तू यहाँ पर दूसरों के कल्याण के लिए आया है।" फिर मैंने देखा कि मैं उनके साथ विदेशों में घूम रहा हूँ। इस स्वप्न के ठीक चार साल बाद 1962 में मैं अमेरिका गया और 1963 में वापिस आया। 24 सितम्बर 1963 को जब मैं देहली आया तो मैं अपने बहनोई के घर ठहरा। मेरा छोटा लड़का तथा भाग्य साथ में थे। मेरा बहनोई महाराज जी का चेला था। उसने कहा कि आज शाम को हिन्दु महासभा भवन में एक बड़े सन्त पंजाब से आये हुए हैं उनका प्रवचन है तो क्या आप हमारे साथ चल सकते हैं ? अब मुझे सफर की थकान थी लेकिन मेरे मन से आवाज आई कि चलो। मैंने कहा शाम को चलेंगे। हम शाम को सत्संग में गये। जब मैं पहुँचा उस समय परमदयाल जी महाराज करीब-२ दो-तीन हज़ार सत्संगियों को सत्संग दे

रहे थे। जैसे ही मैंने उनको देखा मुझे स्वप्न याद आ गया। मैंने भाग्य को कहा कि यह तो वही महापुरुष हैं जिनको मैंने स्वप्न में देखा था। मैं नमस्कार करने को आगे चला। अभी मैं आधे रास्ते में ही था कि उन्होंने कहा "Sharma the great तुम आ गये ?" मैंने सोचा कि यह मेरा नाम कैसे जानते हैं शायद मेरे बहनोई को कह रहे हैं मगर यह बात नहीं थी। जब मैं उनके पास गया और उनके पैरों को हाथ लगाया तो कहने लगे "उठ-2 मैं तेरा ही इन्तज़ार कर रहा था।" मुझे स्टेज पर अपने पास बिठाया और अपने गले की सारी मालाएँ मेरे गले में डाल दीं। मेरे दिल में यह भाव हुआ कि यही परमतत्त्वाधार हैं। उसी मम्य महाराज जी के पास एक सिन्धी औरत आई और कहने लगी "बाबे-2 तेरी बड़ी कृपा है।" महाराज जी ने पूछा क्या बात है माई ? कहने लगी बाबे डाक्टरों ने मुझे तीन महीने पहले कैन्सर बताया मैं तो डर गई। मैंने तेरी तसवीर के आगे दर्दे-दिल से कहा कि बाबा मुझे बचा। इतना कहते ही आप फोटो से बाहर आये और कहा कि तू फलानी-2 दवा लाकर खा ले। मैं बाज़ार गई और वही दवाइयाँ लाकर खा लीं। तीन महीने बाद डाक्टरों ने कहा कि तुझे कैन्सर नहीं है। महाराज जी ने कहा "माई मैं कहीं नहीं गया, तेरा विश्वास काम कर गया।"

महाराज जी के पास लोग आते थे और कहते थे कि महाराज जी जब हम बीमार होते हैं तो आपकी तसवीर को धोकर पी लेते हैं और हम ठीक हो जाते हैं। महाराज जी ने कहा कि जब मैं बीमार होता हूँ तो डाक्टर को बुलाता हूँ। महाराज जी कहते थे कि मैं कुछ नहीं करता तो सत्संगी कहते थे कि बाबा तू नहीं करता मगर तेरी तसवीर करती है। अब मेरी बहन का ड्राईवर महाराज जी की तसवीर

अपनी जेब में रखता है। वह कहता है कि मेरा यह काम हो जाये यदि नहीं होगा तो मैं तुम्हें रस्सी से जकड़ लूंगा और उसका काम हो जाता है।

मैं महाराज जी की सच्चाई को देखकर नतमस्तक हो गया। उन्होंने उस समय जो सत्संग दिया उस सत्संग से मेरे सारे भ्रम दूर हो गये और मुझे अभयदान मिल गया। इस प्रकार मैं परमतत्त्वस्वरूप महाराज जी के सम्पर्क में आया। महाराज जी मेरे पास अमेरिका भी चार-पाँच बार आये। मैंने देखा कि उनका शरीर भी आत्मामय हो गया था। उनका कण-2 भी आत्मामय हो गया था। उन्होंने अपने गुरु की कठिन से कठिन आज्ञा का पालन करते हुए अपने परमतत्त्व को निखारा :--

मोह माया छल चतुराई छोड़ें मूल विकारा।
परहित लागी सहज विरागी ज्ञान बुद्धि भण्डारा।।

मोह का मतलब यह नहीं कि आप प्यार नहीं करो। मोह वह होता है कि आप अपने बच्चे से प्यार करें और दूसरे के बच्चे से नफ़रत करें या उसे प्यार न करें। माया का मतलब यहाँ पर धोखा देना है, छल-चतुराई का विचार हैं। फकीर इन विकारों को त्याग देता है उसके अन्दर यह विकार होते ही नहीं हैं। फकीर के अन्दर यह लक्षण अपने आप आ जाते हैं। मैं कह रहा था कि छल-चतुराई का मतलब यह नहीं कि आप जगत् में झूठ न बोलें। यदि संसार के अन्दर आप सच बोलने लगेंगे तो आप मारे जायेंगे, आपको कोई जीने नहीं देगा लेकिन गुरु के दरबार में आपको झूठ नहीं बोलना चाहिए। आपने जो कुछ किया है उसे गुरु से मत छुपाओ। आपको गुरु के सामने सच्चाई बयान करनी चाहिए। महाराज जी कहा करते थे कि जगत् के अन्दर बिना झूठ के काम नहीं चलता। लेकिन अपने हित के लिए, अपने स्वार्थ के लिए किसी को झूठ बोलकर धोखा देना पाप

है । यदि किसी को बचाना है या आपके झूठ बोलने से किसी व्यक्ति की जान बचती है तो वहाँ पर झूठ बोलना पाप नहीं है । इसके अतिरिक्त इस जगत् के अन्दर झूठ और सच दोनों हैं । यदि इस संसार में उन्नति करनी है और आप बिलकुल सच बोलने लगे तो मारे जाओगे । भगवान् कृष्ण झूठ बोलते थे और युधिष्ठिर सच बोलते थे । जो आदमी कहता है कि मैं सच बोलता हूँ उसके अन्दर अहंकार आ जाता है । युधिष्ठिर का रथ सच बोलने के कारण ज़मीन से पाँच फुट ऊपर उठ कर चलता था । भगवान् कृष्ण सच में रहते थे । सच में रहना अलग चीज़ है और सच बोचना अलग चीज़ है । भगवान् कृष्ण तो बचपन से ही झूठ बोलने वाले थे । घर के अन्दर छींकें से मक्खन चुराकर खा रहे थे तभी यशोदा मैय्या आ गई । यशोदा मैय्या ने पूछा कि क्या कर रहा है तूने मक्खन चुरा कर खाया ? कृष्ण ने कहा कि मैंने मक्खन चुरा कर नहीं खाया । कितनी चतुराई से उन्होंने सच को झूठ बनाने की कोशिश की जिसका वर्णन सूरदास ने अपने एक पद्य में किया है :—

"मैय्या मोरी मैं नहीं माखन खायो"

कृष्ण ने यशोदा मैय्या को तर्क दिया :—

"मैं बालक बाँहियन कौ छोटो छींको किस विध पायो"

अब यशोदा ने यह बात भी नहीं मानी तो कहने लगे :—

"भोर भई गइयन के पाछे मधुवन मोहे पठायो ।
चार पहर बन्सीबट भटक्यो सांझ परे घर आयो ।।"

अब यशोदा ने कहा कि अरे तू झूठ बोल रहा है और मक्खन तेरे मुँह पर लगा है । यह तूने खाया नहीं तो कहाँ से आया ? अब कृष्ण ने उसका भी बहाना बनाया :--

ग्वाल बाल सब बैर परत हैं बरबस मुख लपटायो ।

अब कृष्ण ने सोचा कि मैय्या तो किसी भी बहाने को मान ही नहीं रही है तो आगे कहने लगे :—

तू मैय्या मन की अति भोरी उनके कह पतियायो।

मैय्या तू मन की अति भोली तथा सीधी है। ग्वाल-बाल तो सब झूठ बोल रहे हैं और तू उनके कहने में आ गई। इतना कहने पर भी जब यशोदा नहीं मानी तो अन्त में उसे उलाहना दे दिया :—

हिये तेरे कछू भेद उपजत है जान परायो जायो।
सूरदास प्रभु हँसी यशोदा लै उर कंठ लगायो॥

सूरदास जी कहते हैं कि यशोदा को कृष्ण का यह ताना मन को छू गया और यशोदा ने कृष्ण को हँस कर अपने हृदय से लगा लिया।

जिस प्रकार से माँ का और बच्चे का प्यार होता है उसी प्रकार गुरु और शिष्य का प्यार होता है। भगवान् कृष्ण ने बचपन से ही झूठ बोला यह दिखाने के लिए कि मैं परमतत्त्व हूँ। यशोदा ने कहा कि अपना मुँह तो खोल कर दिखा। जब कृष्ण ने अपना मुँह खोला तो यशोदा को तीन लोक दिखाई दिये। मालिक का झूठ बोलना भी किसी मक़सद से होता है। किसी की भलाई के लिए होता है। महाराज जी ने भी कहा कि किसी की भलाई के लिए झूठ बोलना पाप नहीं है। भगवान् कृष्ण झूठ अवश्य बोलते थे मगर सत्य में रहते थे। उन्होंने स्वयं ही झूठ नहीं बोला बल्कि युधिष्ठिर को भी झूठ बुलवाया। इन सब बातों के होते हुए भी भगवान् कृष्ण युधिष्ठिर से ऊँचे थे। इसका प्रमाण है कि जब अर्जुन का पोता परीक्षित मरा हुआ पैदा हुआ तो आकाशवाणी हुई कि यदि कोई सच्चा पुरुष इस बच्चे पर पानी फेंके तो यह जीवित हो जायेगा। अब द्रौपदी ने कहा कि भगवान् कृष्ण तो जीवित कर नहीं सकते क्योंकि

यह तो महा झूठे हैं। युधिष्ठिर ने कहा कि मैंने भी आधा झूठ बोला था। तब फिर आकाशवाणी हुई कि भगवान् कृष्ण ही इसको जीवित कर सकते हैं। फिर भगवान् कृष्ण ने पानी फेंका तब वह बच्चा जीवित हुआ। इसलिए सच बोलना और बात है और सत्य में रहना और बात है। आप जगत् में रहते हैं आपको झूठ बोलना पड़ता है। बिना झूठ बोले इस जगत् में काम नहीं चलता। लेकिन गुरु के दरबार में गुरु के सामने झूठ नहीं बोलना चाहिए। परमतत्त्वाधार तो इतना सच बोलता है कि सच बोलने से चाहे उसकी जान भी चली जाये उसकी भी वह परवाह नहीं करता :—

दुःख कलेश सह अपने सिर पर, जीव का करें सुधारा।
भव दुःख भंजन काम निकंदन यम से दें छुटकारा॥

अब आप कहेंगे कि कौन ऐसा आदमी है जो दुःख-क्लेश को सहन करना चाहता है? दुःख-कलेश का सहना, उस उद्देश्य की कीमत है, उस मक़सद की कीमत है जिस मक़सद के लिए परमतत्त्वाधार आता है। अवतार में और साधारण मनुष्य में फर्क है जबकि दोनों ही परमतत्त्वाधार से आये हैं लेकिन एक परमतत्त्व से आकर इस जगत् में भटक गया है तथा भूल गया है कि मैं उस परमतत्त्व का ही अंश हूँ और दूसरा उस परमतत्त्व में जाकर फिर दुबारा नीचे लौट रहा है वह जानता है कि इस जगत् में अज्ञान के कारण जीव दुःखी हैं। उनको बताना है कि तिनके के नीचे पहाड़ है, अर्थात् परमतत्त्व तुम्हारे अन्दर मौजूद है। महाराज जी ने काफी अर्से तक दीक्षा नहीं दी क्योंकि दीक्षा देने का मतलब है कि शिष्य की पूरी ज़िम्मेवारी लेना। दीक्षा से गुरु और शिष्य का आन्तरिक सम्पर्क हो जाता है मानसिक सम्पर्क हो जाता है। इसी सम्पर्क के कारण गुरु का रूप प्रकट होता है। मानसिक सम्पर्क से तो गुरु को यह पता

चल जाता है कि उसका शिष्य कष्ट में है या परेशान है चाहे वह उस शिष्य को जानता है या नहीं लेकिन शिष्य की तकलीफ से गुरु को दुःख होता है। यदि शिष्य का 48 घण्टे में दुःख दूर नहीं होता है तो गुरु अपने और शिष्य के मानसिक सम्पर्क के बीच में पर्दा डाल देता है। यह सही बात है कि जब सद्गुरु की विशेष दृष्टि से आपका कल्याण हो सकता है, उसकी Radiation से आपकी भलाई हो सकती है तो क्या दुःखी लोगों के दुःख का असर उनकी Radiation का असर गुरु पर नहीं होगा ? गुरु पर असर अवश्य होगा और उसे उस असर को स्वीकार करना पड़ेगा। परमदयाल जी महाराज को एक ज्योतिषी ने बताया कि आप लोगों को आशीर्वाद मत दिया कीजिये क्योंकि इसका प्रभाव आपके ऊपर पड़ता है लेकिन परमदयाल जी महाराज अन्त समय तक लोगों को आशीर्वाद देते रहे क्योंकि इन दुखियों के दुःख को दूर करने के लिए ही तो उनका अवतार हुआ था। इस दृष्टि से यह जो काम है वह बड़ा कठिन काम है लेकिन यह उस मक़सद की कीमत है जिस मक़सद या उद्देश्य को लेकर वह आया है और उसको यह कीमत चुकानी पड़ती है। इस चुकाने में वह शरीर से भी कष्ट उठाता है। रामकृष्ण परमहंस को कैंसर भी भोगना पड़ा। यदि उसने इस कीमत को अदा नहीं किया या नहीं चुकाया तो उसे दोबारा कीमत चुकाने के लिए आना पड़ेगा। यह कर्म-सिद्धान्त है :—

धर कपास की गति विमल चित, निरस विशुद्ध कहायें।
सहें विपति कठिनाई जग की, और का दोष छुपायें॥

फकीर मालिक से सिफारिश करता है कि अज्ञानी लोगों के दोषों को क्षमा कर दें। अभी आपने सुना कि साधु को किश्ती के अन्दर कुछ दुष्ट लोगों ने मारा। साधु का

खून बहा और आकाशवाणी हुई कि मैं इस किश्ती को डुबोये देता हूँ क्योंकि इन दुष्टों ने मेरे भक्त को तंग किया है। साधु ने कहा कि मालिक ये जीव हैं, अज्ञानी हैं, इनको क्षमा कर दो। फिर आकाशवाणी हुई कि मैंने इन जीवों को माफ किया और ये सब तेरे प्रभाव के कारण भवजल से पार हो जायेंगे। गुरु की अवस्था विशुद्ध और विमल चित्त है :--

सरल भाव रहें जग माहीं अपना रूप संवारें।
औरन के अवगुण नहीं देखें दया का मर्म विचारें॥

दया का मर्म यही है कि साधु दूसरों के अवगुणों को नहीं देखता क्योंकि मनुष्य के अवगुण पूर्व जन्मों के संस्कारों के कारण होते हैं और गुरु के सम्पर्क, दया के कारण पिछले जन्मों के संस्कार मिटते नहीं हैं बल्कि कट जाते हैं। कटने और मिटने में अन्तर है। जैसे बहुत बड़ा दुःख जब आना होता है तो वह थोड़ा हो जाता है :—

सुख देवें दुःख हरें निरन्तर क्षमा करें अपराधा।
हँसी खुशी आनन्द परम गति अगम अलेख अबाधा॥

क्षमा करने का लक्षण परमतत्त्वाधार में होता है। जब भरत की माँ ने भरत की गैरहाज़री में मन्थरा के कहने पर कुकर्म किया और राजा दशरथ से दो वरदान माँगे कि भरत को राज्य और राम को चौदह वर्ष का वनवास दिया जाये। इसके परिणाम स्वरूप राजा दशरथ का निधन हो गया। जब भरत को इस बात का पता चला तो उन्होंने अपनी माँ कैकेयी से कहा कि तूने यह क्या किया? जिनको मैं भगवान् मानता हूँ, गुरु मानता हूँ, परमतत्त्व मानता हूँ उनके साथ तूने अन्याय किया। भरत बहुत दुःखी हुए और गुरु वसिष्ठ के पास गये। गुरु वसिष्ठ ने कहा :—

सुनहू भरत भावी प्रबल बिलखि कहेउ मुनि नाथ।
हानि लाभ जीवन मरण, यश अपयश विधि हाथ॥

हे भरत ! तू चिन्ता मत कर, तेरा अपयश हो गया है मगर यह तेरी किस्मत में लिखा था। हानि, लाभ, जीवन, मरण, यश, अपयश यह सब पिछले कर्मों के कारण होता है। यदि इन सब बातों से ऊपर उठना है तो गुरु की सेवा और गुरु में विश्वास होना चाहिए क्योंकि गुरु सदैव क्षमा करता है। गुरु वसिष्ठ की यह बात सुनकर भरत ने कहा :--

जानत हूँ निज नाथ स्वभाऊ,
अपराधिहुँ पर कोह न काहू ।

मैं अपने मालिक का स्वभाव जानता हूँ वह अपराधी पर कभी क्रोध नहीं करते। यह बात दूसरी है कि गुरु क्रोध को दिखा दें। गुरु का क्रोध को दिखाना बहुत अच्छा होता है। यदि गुरु क्रोध को दिखा दे तो आपका काम बन जाता है लेकिन वास्तव में गुरु क्रोध नहीं करता "क्षमा करें अपराधा" उस क्षमा से ही जीव का कल्याण होता है :--

नाम फकीर धराया तूने, हो फकीर अब साँचा।
जैसा नाम तो गुण भी वैसा, अगम अलेख अबाधा ।।
है फकीर का नाम पियारा, मैं फकीर का दासा।
तन मन धन फकीर पर वारूँ, बसूं सुसंग सुबासा ।।

तन, मन, धन वारने का मतलब है कि जब आप गुरु के दरबार में जाओ तो गुरु को टकटकी बाँध कर देखो। गुरु की आँखों से आँखें मिलाकर देखो। गुरु की Radiation का आपके ऊपर असर होता है :--

दर्शन करे पुनि वचन सुने, सुन सुन कर नित मन में गुने।
गुन गुन कर काढ़ ले सारा, काढ़ सार तिस करे अहारा ।।

पहले गुरु के दर्शन करें फिर वचनों को सुनें और उन वचनों का मन में मनन करें, मनन करने के बाद उसमें से अपने मतलब की बात निकाल कर स्वयं जीवन में लागू करें। यदि आप जीवन में लागू करोगे तो आपको अभयदान

मिल जायेगा। गुरु को टकटकी बाँध कर देखने से आपको अपने तन, मन की सुधि न रहेगी। तब आपकी जो अवस्था होगी वह एकत्व की अवस्था होगी :--

कठिन नाम है कठिन काम है, कठिन फकीर कमाई।
जग के भव दुःख नामें पलमें, जब फकीर जग आई ।।

दाता दयाल जी महाराज कह रहे हैं कि फकीर का नाम भी कठिन है, काम भी कठिन है और उसकी कमाई भी कठिन है। महाराज जी ने 95 वर्ष की आयु तक आराम नहीं किया और अन्तिम दिन तक सत्संग देते रहे। जब अवतार मनुष्य के रूप में आता है तो मनुष्य के सभी गुण, अवगुण लेकर आता है। वह रोता भी है, हँसता भी है। वह दुनिया के सभी सुख-दुःख अनुभव करता हुआ आपको बताता है कि तुम ही दुःखी नहीं होते मैं भी दुःखी होता हूँ लेकिन इस दुःख के बाद भी मालिक से लगन लगी है। उसने अपने आपको मालिक को समर्पित कर दिया है। मालिक को समर्पित कर देने से तुम इन दुःखों में फँसोगे नहीं। फकीर अर्थात् गुरु एक मिसाल कायम करता है इसलिए कठिन कमाई करनी पड़ती है। कमाई पहले करनी पड़ती है बाद में कमाई की जरूरत नहीं रहती है। इसलिए गुरु आपके संस्कारों के मुताबिक, आपके मुताबिक आपको सेवा बताता है। सेवा के बाद में आपको दीक्षा देकर सुरत-शब्द योग पर चलाता है। इस योग में यह जरूरी है कि आप ऐसे समय पर उठो जब सभी लोग सो रहे हों। शुरू-2 में आपको सुबह तीन-चार बजे उठने में कठिनाई होगी लेकिन इस कठिनाई से गुजरने के बाद आप परमतत्त्व को प्राप्त कर सकते हो और आपकी सहज समाधि हो जायेगी :--

जो फकीर मोहे दर्शन देवे अपना भाग्य सराहूँ।
अपने तन की चाम की जूती पग फकीर पहनाऊँ ।।

सत्तपुरुष की सेवा के लिए सब कुछ त्याग देना पड़ता है। उस मालिक के रास्ते में जो भी चीज़ आये उसे त्याग देना चाहिए चाहे वह कितनी भी प्रिय क्यों न हो। उसको त्यागने से आपको हानि नहीं होगी। गुरु आपसे क्या चाहता है ? क्या उसे आपके धन की ज़रूरत है ? अरे ! वह गुरु ही नहीं जिसको अपने लिए सत्संगियों के धन की ज़रूरत हो। कल आपको मेरे प्यारे वर्मा ने बताया कि वह सन्त ही नहीं जो सत्संगियों के धन पर जीवित रहता है। इसलिए गुरु को स्वयं धन कमाना बहुत ज़रूरी है। गुरु को या उस मालिक को किसी भी चीज़ की जरूरत नहीं है। वह आपकी भावनाओं का भूखा है। वह तो आपकी आत्मशुद्धि के लिए कहता है। दान देना भी ज़रूरी है, जो देता है उसको मिलता है। दान देने से आत्मशुद्धि होती है, आत्मा का कल्याण होता है लेकिन :--

शिष्य को ऐसा चाहिए, गुरु को सब कुछ देय।
गुरु को ऐसा चाहिए, शिष्य से कुछ न लेय ॥

गुरु आपकी भावना को देखता है और वह आपकी उसी भावना से प्रेम करता है। आपको सब कुछ उसी से मिल जाता है :--

मैं नहीं राम कृष्ण का सेवक, ईश ब्रह्म नहीं जानूं।
मैं फकीर का नाम दीवाना, सबसे बढ़कर मानूं ॥

इस वाणी का समझना बहुत ज़रूरी है। दाता दयाल जी अपने शिष्य परमदयाल जी महाराज को कह रहे हैं :--

मैं नहीं राम कृष्ण का सेवक, ईश ब्रह्म नहीं जानूं।

क्या दाता दयाल राम, कृष्ण की निन्दा कर रहे हैं ? नहीं। मैंने आपको बताया राम, कृष्ण, फकीर उस परमतत्व के अवतार हैं जो समय के मुताबिक होते हैं। त्रेतायुग में मनुष्यों को राम के ही मार्ग-दर्शन की ज़रूरत थी इसलिए

राम का अवतार हुआ। द्वापर युग में पूजा और भक्ति की जरूरत थी इसलिए कृष्ण का अवतार हुआ लेकिन कलियुग में सहज-समाधि के मार्ग-दर्शन के लिए सन्तों ने अवतार लिया। उन्होंने बताया कि मालिक एक है तुम झगड़े में क्यों पड़े हो। उस एक मालिक का न रंग है, न रूप है वह परम-दयाल है। तुम आपस के झगड़े समाप्त करके उस परमदयाल का ही नाम लो। नाम की महिमा क्या है? जैसा नाम वैसा उस नाम का प्रभाव। यदि आप जगत् में रहने वाली चीज़ का नाम लोगे तो फिर आप जगत् में ही रहोगे। ब्रह्मा, विष्णु, शिव जगत् के ही अन्दर हैं। यह बात दूसरी है कि आप परमतत्त्व मान कर यदि शिव का नाम लोगे तब वह दयाल है। लोग शिव को समझे नहीं। तुलसी दास जी ने कहा है कि :—

नमामीशमीशाननिर्वाणरूपम्।

शिव का नाम ईश है :--

विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपम्।

कौन सा शिव? जो विभु है, फैला हुआ है, ऐसा देव जो सब जग का स्वरूप है :--

अजंनिर्गुणं निर्विकल्पंनिरीहं, चिदाकाशमाकाशवासंभजेऽहम्॥

जो आकाश अर्थात् शब्द में फैले हुए हैं ऐसे शंकर परमतत्त्व कहे गये हैं :--

निराकारमोंकारमूलं तुरीयम्।

जो ओंकार के मूल हैं तथा ओंकार से ऊपर हैं :--

गिराज्ञानगोतीतमीशं गिरींशम्।

ऐसे ईश की स्तुति ज़बान से नहीं की जा सकती, वहाँ ज्ञान नहीं पहुँच सकता। वह दयाल है। उसके लिए ज्ञान की ज़रूरत नहीं बल्कि भक्ति की ज़रूरत है :--

करालं महाकालकालं कृपालुं गुणागारसंसारपारं नतोऽहम्।

कराल भी उसी का रूप है। महाकाल भी वही है, कृपाल भी वही है। ऐसे शिव को नमस्कार है जो संसार से परे है :--

तुषाराद्रिसंकाशगौरं गभीरं, मनोभूतकोटिप्रभाश्रीशरीरम्।

जिसके मन से कोटि-2 ब्रह्माण्ड बने हैं ऐसा शिव दयाल है :--

स्फुरन्मौलिकल्लोलिनी चारुगंगा,
लसद्भालबालेन्दुकंठे भुजंगाः ।।

यह आकाशगंगा भी उसी ने बनाई :--

चलत्कुण्डलं शुभ्रनेत्रं विशालं,
प्रसन्नाननं नीलकंठं दयालुम्।
मृगाधीशचर्माम्बरं मुंडमालं, प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि ।।

वह मृगछाल पहने हुए है। शंकर के ऐसे रूप को नमस्कार है।

दाता दयाल ने कहा :—

ना मैं राम कृष्ण का सेवक ईश ब्रह्म नहीं जानूं।

राम और कृष्ण उस समय के अवतार थे जिस समय दुनिया को इनके मार्ग-दर्शन की जरूरत थी लेकिन इस समय के लिए दयाल को आना पड़ा क्योंकि कलियुग में सन्तों ने दुकानदारियाँ बना ली तथा लोगों को धोखा देने लगे। सन्तमत को ठीक करने के लिए राम नहीं आ सकते थे, कृष्ण नहीं आ सकते थे केवल सन्त ही आकर सच्चाई को बता सकते थे। इसलिए सन्त को ही आना पड़ा :—

मेरे साध हैं शब्द विवेकी, सन्त वंश कुल शोभा।
चरण कमल मस्तक पर धारूं, प्रेम मगन मन छोवा ।।
एक घड़ी साधु की संगत, कटे मोह यम फाँसी।
मेरी नज़र में साधु फकीरा, सत चित आनन्द राशी ।।

सन्त के पास सत्, चित् और आनन्द है। सन्त मालिक

से जुड़ा रहता है और सच्चिदानन्द उस मालिक से निकला है। वह सत्, चित्, आनन्द की खान है। सच्चिदानन्द बहता चला जाता है। यदि आपको सत्संग के अन्दर शान्ति नहीं मिलती, आनन्द नहीं आता तो समझ लो कि वह सच्चा सत्तगुरु नहीं है। सत्तपुरुष के सत्संग में मंगलमूल होगा, विशेष प्रकार का वातावरण पैदा हो जाता है जो आपको ऊपर उठा लेता है और आपको मालिक की तरफ ले जाता है। यह वैसी ही बात है जैसे एक टी. बी. का मरीज़ जहाँ-2 जायेगा वहाँ-2 पर टी. बी. के कीटाणु छोड़ता चला जायेगा उसी प्रकार सन्त जहाँ-2 जायेगा वह सच्चिदानन्द की किरणें छोड़ता जायेगा। यदि आप फकीर के चरणों में जाओगे तो वह आपको फकीर बना देगा। मैं अपने आपको फकीरमय लिखता हूँ। महाराज जी की कृपा से मुझे एक वाक्य में पता चल गया कि शरीर, मन और आत्मा अपना काम करते रहेंगे। मनुष्य यदि गंगा के किनारे बैठ जाये, समाधि लगाये तब भी वह उस हालत में पहुँच जाये :--

माला फेरूं न हर भजूं, मुख से कहूँ न राम।
मेरा राम मुझको भजे, तब पाऊँ विश्राम ॥

जब पूरी सेवा हो जाती है तथा पूरी duty हो जाती है तब मालिक कहता है कि तुझे कुछ भी करने की जरूरत नहीं है। यह हालत उसकी होती है जो अपने लिए कुछ नहीं माँगता। जब फकीर ने पूरी कमाई अच्छी प्रकार से कर ली तब मालिक प्रकट हुआ और फकीर से कहा "माँग क्या माँगता है ?" फकीर ने कहा "मैं कुछ नहीं माँगता"। मालिक ने फिर कहा "माँग क्या माँगता है ?" फकीर ने दुबारा भी मना कर दिया। तीसरी बार फिर मालिक ने कहा "अरे माँग ले जो चाहे माँग ले" फकीर ने कहा "अच्छा संसार के सभी जीवों को मुक्त कर दो" मालिक ने कहा

"यह तो नहीं हो सकता"। फकीर ने कहा "मैंने कब कहा था कि मुझे कुछ दो"। मालिक ने फकीर से कहा कि तू मुझसे बड़ा है, तू सब कुछ कर सकता है। जो अपने लिए कुछ नहीं माँगता उसकी यह हालत होती है :--

साधु की संगत गुरु की सेवा, सहज ही काम बनावे।
जिस पर साध की दृष्टि पड़ गई, फिर जग योनि न आवे॥

अब सेवा का यह मतलब नहीं कि मैं बैठा हूँ और तुम मेरे पैरों को दबाओ। यह भी सेवा वही करता है जिसको पिछले जन्म की सेवा देनी होती है लेकिन शारीरिक सेवा से फायदा यह होता है कि सत्पुरुष या गुरु की Radiation मिलती है। वैसे एक दृष्टि से शरीर की सेवा सबसे उत्तम सेवा है। दूसरी दृष्टि से पहले गुरु, शिष्य एक थे फिर अलग होकर बिछुड़ गये, अब आकर मिले हैं। उनको एक होना है। गुरु के नज़दीक रहने से उसके शरीर की Radiation आती है लेकिन हर एक मनुष्य को यह सेवा नहीं मिलती है। जिसके कर्म में यह सेवा लिखी है वही यह सेवा करेगा। महाराज जी हर एक को उसके माहौल के मुताबिक सेवा देते थे। साधु की संगत में रहने से गुरु की सेवा मिलती है। और सेवा में अपने आपको भुला देना पड़ता है। सेवा से आपके सहज में ही काम बन जाते हैं :--

तरबर सरबर मेघ का पानी, औरों को सुखकारी।
तैसे ही सुन मेरे फकीरा, साधु परउपकारी॥

वैसे तो हरएक को शरीर, मन और आत्मा से ऊपर जाना है। यह शरीर है ही काम के लिए, सेवा के लिए। साधु इस बात को जानकर अपने शरीर को काम में लगा देता है भक्ति में शरीर सेवा के लिए। हनुमान भगवान् राम के परमभक्त हैं। उन जैसा कोई भक्त नहीं है। एक बार भगवान् राम ने हनुमान से पूछा "हनुमान बता तेरा, मेरा

क्या सम्बन्ध है ? क्या रिश्ता है ?" तब हनुमान जी ने कहा :-

शरीरदृष्ट्या तव दासोऽस्मि ।
जीवदृष्ट्या तवांशोऽहम् ॥
आत्मदृष्ट्या त्वमेवाऽहं ।
इति मे निश्चितं मतिः ॥

मेरा शरीर आपकी सेवा के लिए है। मैं चाहता हूँ कि अपने शरीर से आपकी सेवा ही करता रहूँ। जीव की दृष्टि से मैं आपका अंश हूँ और आत्मा की दृष्टि से मैं हूँ ही नहीं केवल आप ही हैं यह मेरी निश्चितता है :--

तू फकीर बन तू फकीर बन, तू फकीर बन भाई।
मैं भी तरूं फकीर चरन लग ऐ फकीर सुखदाई ॥

गुरु भी परमतत्त्व और शिष्य भी परमतत्त्व के अवतार हैं। गुरु ने शिष्य को पहचाना, शिष्य ने गुरु को पहचाना। जिस शिष्य को जिस गुरु से परमतत्त्व का दर्जा मिलना होता है वह उसके पास खिंच आता है। चाहे वह अंहेरी में बैठा हो, चाहे वह हैदराबाद में हो, चाहे वह अमेरिका में बैठा हो। कुदरत उसे खींच कर ले जाती है। गुरु ने भी जिस शिष्य को काम सौंपना होता है, तथा शिष्य के परम-तत्त्व को जगाकर अपने जैसा बनाना होता है, वह शिष्य जहाँ भी हो गुरु उसे ढूंढ़ निकालता है। महाराज जी अमेरिका आते थे। मैं उनके सत्संग आयोजित करता था। अमेरिकन बहुत खुश होते थे। जब मैं कालिज जाता था तो डा० परसराम से कहते थे 'परसराम ! मैं इन अमेरिकनों को सत्संग देने के लिए नहीं आया हूँ मैं तो I. C. Sharma को तैयार करने के लिए आया हूँ। इसलिए गुरु शिष्य का नाता दैवी नाता है जगत् का नाता नहीं है। यह बातें किसी की समझ में नहीं आ सकतीं क्योंकि यह दिव्य बातें हैं। इनमें अजीब और ग़रीब अनुभव होते हैं। कभी आपकी

प्रशंसा होगी तो कभी आपके नाम को धक्का लगेगा। यह सब मालिक की देन है। परमतत्त्व खुद शरीर, मन और आत्मा में आकर विभिन्न प्रकार की लीला करता है :--

सुन ले कथा सुनाऊँ तुझको, प्रगटे विमल विवेका।
जीव अनेक रहें जग अन्दर, पर फकीर कोई एका॥

दाता दयाल जी महाराज ने फकीर की मिसाल देने के लिए परमदयाल जी महाराज के पिछले जन्म भी बताये और कहा कि संसार में जीव तो बहुत हैं जो शिष्य भी हो सकते हैं गुरु भी हो सकते हैं सब कुछ हो सकते हैं लेकिन फकीर जो वास्तव में परमतत्त्व का स्वरूप है वह संसार में केवल एक ही होता है। दाता दयाल जी ने उसकी मिसालें दी हैं। एक मिसाल में दाता दयाल जी ने परमदयाल जी महाराज के पिछले जन्म को बताते हुए कहा "तुम पिछले जन्म में हरगोबिन्द थे। हरगोबिन्द जहाँगीर के समय में हुए। जहाँगीर कट्टर मुसलमान था। जहाँगीर ने हरगोबिन्द को कैद करके जेल में डाल दिया। जहाँगीर का प्रधानमन्त्री मियांमीर फकीर मुसलमान था। उसने जहाँगीर से कहा कि तू हरगोबिन्द नाम के फकीर को छोड़ दे वरना तेरे राज्य का तख्ता पलट जायेगा। जहाँगीर ने हुकम दिया कि हरगोबिन्द को जेल से बाहर ले आओ। अब हरगोबिन्द जेल से बाहर आने के लिए तैयार नहीं थे। फकीर इस जगत् की जेल में अब सब कैदियों को छुड़ाने के लिए आता है। हरगोबिन्द ने कहा कि मैं जेल से बाहर तब आऊंगा जब सात हज़ार कैदियों को छोड़ दोगे। जहाँगीर ने कहा "यह कैसे हो सकता है ?" लेकिन मुश्किल यह थी कि यदि वह नहीं छोड़ता तो उसका राज्य समाप्त हो जाता। अब जहाँगीर ने कहा कि जितने कैदी आपके चोगे को पकड़ सकें उतनों को छोड़ दूंगा। हरगोबिन्द ने इतना बड़ा कुर्ता

बनवाया कि सारे कैदियों ने उसे पकड़ लिया और सभी कैदी जेल से बाहर आ गये।

दाता दयाल जी ने परमदयाल जी को कहा "फकीर अब मैं तेरी कथा सुना रहा हूँ" :--

तीजी कथा सुनाऊँ तुझको, सुन सुनकर चित लाना।
कथा नहीं यह और की प्यारे, तेरी कथा सुनाना॥
हरगोबिन्द को कैद में डाला, जहाँगीर ने भाई।
ले ग्वालियर किले में फाँसा, हुआ निपट दुःखदाई॥
मियाँमीर ने उसे चिताया, छोड़ फकीर को छिन में।
नहीं तो उलटे राज पद तेरा, एक रात एक दिन में॥
जहाँगीर ने हुकम सुनाया, हरगोबिन्द को लाओ।
यह बोले मैं कैद नहीं छोड़ूं, कितना करो उपाओ॥
मैं फकीर हूँ देह बन्ध में, जीवों के हित आया।
सात हजार छोड़ दे कैदी, उपजी मन में दाया॥
बादशाह ने सब को छोड़ा, जब यह बाहर आये।
आप छुटे औरन को छुड़ाया, दया का साज सजाये॥
यह ऐतिहासिक कथा पुरानी, चरित पुनीत सुहावन।
मन रंजन मन चेत बढ़ाबन, मन भावन मन पावन॥
देह के बन्ध फकीरा आवे, बंध निरबंध न सोई।
बंधकर बन्धुवे जीव छुड़ावें, समझे यह गति कोई॥
तू तो आया नरदेही में, धर फकीर का भेसा।
दुःखी जीव को अंग लगाकर, लेजा गुरु के देसा॥
तीन ताप से जीव दुःखी हैं, निबल अबल अज्ञानी।
तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी॥
नाम फकीर धराया तूने, काम फकीर का कर ले।
गुरु की दया साथ ले अपने, भक्ति की झोली भर ले॥
तू इराक से अब के आया, सत संगत के कारण।
ले प्रसाद यह सत संगत का, हो जा भव निधि तारन॥

राधास्वामी दया के सागर, होंगे तेरे सहाई ।
कुक्र में उतरे साँच फकीरा, सब की करें भलाई ॥

ये जितने भी जीव मेरे साथ हैं इनका पिछले जन्म का सम्बन्ध है। यदि इन्होंने अपना रास्ता नहीं छोड़ा तो यह सब अपने-२ काम को करते हुए एक दिन परमतत्त्व में विलीन हो जायेंगे। मैं आपको सच्चे दिल से आशीर्वाद तथा सद्भावना देता हूँ।

सबको राधास्वामी !

XXXX

आवश्यक सूचना

मानवता मन्दिर ऐसे व्यक्तियों की सेवाएँ सहर्ष स्वीकार करेगा जो मन्दिर कार्यालय, प्रबन्ध अथवा अन्य किसी रूप में अवैतनिक या भत्ता एवं आवास-भोजन सहित सेवा करना चाहते हैं।

ऐसे उत्सुक महानुभाव कृपया निम्नांकित पते पर पत्र लिखें या स्वयं मिलें।

एस० एल० सेठी
सेक्रेटरी
मानवता मन्दिर,
सुतेहरी रोड, होशियारपुर
(पंजाब)।

मासिक सन्देश

परमसन्त हजूर मानव दयाल

डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज

मेरे परमप्रिय सत्संगियो

राधास्वामी, परमदयाल जी सहाई !

इस बार इस मासिक सन्देश में मैं आपसे थोड़े समय के लिए ही बातचीत कर सकूंगा। उसका कारण यह है कि इस बार के मानव मन्दिर के अंक में मेरा सत्संग बहुत ही लम्बा हो गया है। मैं यह नहीं चाहता कि उस सत्संग को दो भागों में बाँट दिया जाये। इसलिए आप उस सत्संग को पूरी तरह पढ़ें और उस सत्संग को ही मेरा प्रेरणा देने वाला सन्देश समझें।

जहाँ तक इटारसी के बाद जनवरी के दौरे का सम्बन्ध है मैं उसकी सूचना आपको संक्षेप में देना चाहता हूँ। जैसे मैंने पहले कहा है कि इटारसी में बहुत से लोग बाहर से भी आ गये थे। उनमें से हमारे मध्य प्रदेश के आचार्य सूर्यनारायण भट्ट जी भी थे। वह हमारे साथ इटारसी से रेलगाड़ी में तराना चले। चार-पाँच और छः जनवरी को तराना में स्वर्गीय श्री सेवा राम जी के फार्म पर सत्संग आयोजित किये गये। इसी फार्म में परमदयाल जी के परम भक्त और उज्जैन तथा तराना के मानवता धर्म के कार्यकर्त्ता

श्री सेवा राम जी की समाधि भी है। यहाँ पर एक विशाल शामियाना लगाया गया था और करीब छः हज़ार सत्संगी तराना और आसपास के गाँवों से बड़ी श्रद्धा से सत्संग सुनने के लिए आये हुए थे। मुझे यह देखकर बहुत अच्छा लगा कि यह हज़ारों सत्संगी रात को कड़कती ठण्ड में उसी शामियाने के अन्दर ही सोते रहे। मैंने एक रात को सत्संगियों से पूछा क्या आपको इस खुले स्थान पर रात को सर्दी नहीं लगती ? उन्होंने उत्तर दिया महाराज, हम आपके सत्संग को सुनकर निहाल हो जाते हैं। ऐसी सर्दी में सोना हमारी आदत है।

बाद में मुझे पता लगा कि यह हज़ारों सत्संगी रात को काफी समय तक छोटी-2 टोलियों में बैठकर यह बातचीत किया करते थे कि आज के सत्संग में हमने क्या समझा ? यह बात मुझे उज्जैन वाली श्रीमती रामाबाई के भाई श्री महेन्द्र ने बताई जिसने इन्दौर में बड़ा अच्छा उद्योग चला रखा है। तराना के सत्संग बहुत ही पसन्द किये गये। इन सत्संगों में हमारे सत्संगियों के अलावा गैर-सत्संगी भी सम्मिलित हुए थे। उनमें से एक मध्य प्रदेश के विख्यात कवि शिव उपाध्याय भी थे। उन्होंने तीन दिन सत्संग सुनने के बाद एक कविता में अपने भाव सत्संग में सुनाये। यह कविता मई के मानव मन्दिर में छप चुकी है। इसके पढ़ने से ही आपको यह स्वयं पता चल जायेगा कि तराना के सत्संगों का क्या प्रभाव हुआ होगा। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है मैं यह कह सकता हूँ कि इन तीन दिनों के सत्संगों में सत्संग देते समय मैं बेखुदी में था और मुझे ऐसा लगता था कि मेरे अनुभव और विचार सहज में मेरे अन्दर से निकल कर बाहर प्रवाहित हो रहे हैं। चौथे दिन हम उज्जैन से गुज़रते हुए इन्दौर के लिए रवाना हो गये।

उज्जैन में हम थोड़े समय के लिए श्रीमती रामाबाई के घर और उनके भाई श्री बन्सी लाल सर्राफ के घर गये। यहाँ पर यह बता देना जरूरी है कि तराना में सेवा राम जी का परिवार उनकी पत्नी और उनके पुत्रों में से दो पुत्र घनश्याम और बलराम रात-दिन सत्संग के कार्य में लगे रहे। इसी प्रकार तराना में ही श्रीमती रामाबाई उनके पति गोयल साहिब और उनके सब परिवार वाले सत्संग की व्यवस्था में रात दिन जुटे रहे। वास्तव में तराना का सत्संग उज्जैन वालों के लिए भी होता है। इसलिए उज्जैन के बहुत से सत्संगी तराना में मौजूद थे। इसी प्रकार जब उज्जैन में सत्संग होता है तो तराना वाले वहीं पर आते हैं। तराना के सत्संग के दौरान में हम एक-दो घण्टों के लिए इटावा गाँव में गये वहाँ भी सत्संग में काफी संख्या में लोग मौजूद थे।

इन्दौर से श्रीमती दयाल पुत्री लीला और उनके भानजे श्री महेन्द्र गुप्ता तराना आ गये थे। वह हमें 7 जनवरी को कार से इन्दौर ले गये। यहाँ पर 9 तारीख तक तीन-चार सत्संग आयोजित किये गये जिनमें से दो श्री अग्रवाल पाठशाला में, एक इन्दौर के राजकीय कन्या महाविद्यालय में और एक श्रीमती लीला के स्थान पर धन्वन्तरी नगर में आयोजित हुए। इस प्रकार इस कार्यक्रम के बाद हम 9 जनवरी को इन्दौर से रवाना होकर 10 जनवरी को देहली वापस पहुँच गये।

जैसे मैंने पहले कहा है कि यह मासिक सन्देश केवल संक्षेप में ही दिया जा सकता है। अगले मासिक सन्देश में इसके आगे की सूचना और तप की व्याख्या की जायेगी। इन्हीं दो शब्दों के साथ मैं आपको इस महीने की सद्भावना देता हूँ और सच्चे दिल से चाहता हूँ कि आप शरीर से स्वस्थ मन से प्रसन्न, आत्मा से आनन्दित और सुरत से शब्द-लीन हो जायें।

आपका फकीरमय

मानव

ENGLISH SECTION

Of

Manav Mandir

A Paper devoted to the Social, Cultural
and Spiritual Welfare and uplift of
Mankind all over the World.

BE MAN

June 10th, 1986.
MANAVTA MANDIR
Hoshiarpur, (Pb.) India.

Data Dayal Maharshi
Shivbrat Lal Ji Varman
M A., LL.D.

DISCOURSE IV

TRINITY OF THE MEANS

The above three are the principles of trinity. Conjointly this trinity might be called tri-unity. For in reality it is the union of three—three in one and one in three. In essentiality there is love which knows no distinction or differentiation. It is a sort of intuition bereft of cognition. In intellectuality there is distinction or differentiation. It knows and deciphers in physicality there is the realisation.

To make the point clear the three abodes rather the three dimensions of the self have the properties and peculiarities of their own and they may respectively be styled Love, Light and Life. These are the three trinities.

Love is essential pertaining to the essence, Light is intellectual pertaining to mentality and Life is physical pertaining to the gross manifestation of the substance.

It seems rather desirable to make the point still plainer and clearer. The three items of trinity which

we call Love, Light and Life are nothing but conditions of intuition, cognition and sensation.

Love implies intuition. Intuition is a faculty which is the primary source that proceeds. Cognition is the faculty which vibrates from intuition and is, in its nature, subtle. From this cognitia faculty is derived sensation which assumes apparent form and can be sensed. It is gross. This much for Causal, Subtle and Gross bodies.

The three faculties enumerated above have their own conditions assigned to them. The first or essential is a state of sound sleep wherein the sleeping entity is not visited by dreams or dreamy objects. It is all one and perfect. As has been said before, perfection or wholeness knows no wants. It is here that one gets the idea of wholeness. The next is the condition of dreamy sleep wherein the sleeper is visited by various dreams, which are nothing but his own conceptions and the outcome of his own mentality. The third state is wakefulness wherein the subtle perception assumes the form of gross realization.

Wakefulness pertains to the plane of senses wherein the senses play their part in the plane of physicality. Higher above this state is the mansion of mind principle where the mental faculty is the predominant factor; while in the region highest is the faculty of essentiality.

There are three different planes of consciousness, *viz.*, Intuitive, Ideative, Sensual tive. They have their respective functions.

Unity is the attribute of the first, duality is the attribute of the second and diversity is the attribute

of the third. In sound and dreamless sleep there is the unity of all. There is no discrimination or differentiation. Nobody can doubt its truth. All are so united together that the conception of the unity itself seems to be impossible. It is only in the condition of wakefulness that one realizes what has been experienced there. The memory translates it on the plane of comprehension. In the second plane of consciousness, *viz.*, dreamy sleep, the dreamer and his dreams are the two objects which function together. Undoubtedly there exists diversity and diversity in variety, but all these are nothing short of the ideation of the idealiser and therefore the experience of that stage has been confined to duality only. While in the third region of sensuality the objects in view appear in-numerable forms materialised and grossified.

Love, Light and Life are the three mediums or 'media' through which these consciousnesses are acquired When disunited, disintegrated and in ifferentiated they are one. In fact they are inseparable from one another. Where there is life there exists light and love also. There can be no life without light and love, no love without life and light. In the same way no light is possible without life and love. Where there is light, life and love are its companions and where there is love, l fe and light are its comrades. They are triunes in the real sense of the word. These triunes, or rather the three mediums of conception, serve the purpose of realizing the truth and they do not find expression in it. It is something above and beyond the so called tri-unity or trinity. Never think for a moment that

the application of triunes will enable one to grasp the Truth for it lies beyond and beyond. These consciousnesses pertain to the plane of three dimensions while the Truth belongs to the fourth region or fourth dimension. No doubt this plane of trinity serves its own purpose. It has been quite impossible to reach the goal without its comprehension, but trinity is not the Goal. The goal is to be sought elsewhere and will be explained hereafter.

DISCOURSE V

TRINITY PERVADES UNIVERSE

Look around and about yourself. The items of trinity will attack you from all sides. Everything will appear as if it were trihinged or having three different parts jointed together to make one whole. From metaphysical point of view every being is composed of three items, soul, mind and body. The soul itself is three-aspected and so are the mind and body.

Everything in the realm of matter has top, centre and bottom. Take the instance of your body. From tip to toe you will see that every limb of it is tripartite; legs, trunk and head are the three main divisions which form your body as one whole. Look at your arms ; it is made up of three parts, hand (palm), forearm (between elbow and wrist) and back arm (part between shoulder and elbow) The same resemblances you will find in your legs, in your trunk, etc. so much so that if you examine your body carefully you will see that every animal is three-eyed, three nosed, three-tongued, three-handed, three-legged and so on. All these assertions

require explanation. Take the case of your eyes. There exists a third pupil between the two eyepits just midway between the two eyebrows. Three-handed or three-legged you may be considered if you take into consideration the joining link that unites the two separate limbs together. In Sanskrit this central connecting nerve is called 'sushmana' and runs from topmost part of the body to rectum joining the two halves of the body.

In religious world also religious people have divided the creation into three parts, *viz.*, firmament, intermediate zone and earth. In Hindi आकाश, अन्तरिक्ष और पाताल. The conditions after death have also been enumerated as three, *viz.* Heaven, Purgatory and Hell.

If you keenly observe the formation of any animal body you will find it divided in three main parts just in the same way as the human body is, no matter whether it is ant, insect or animal cub. The first portion is the seat of energy where force is concentrated or polarised, viz , head. This is the first zone or pole Just at another extremity there is the portion where meagre sort of force or energy is located and which gets its life impetus from the zone above. Between two is the region which partakes of the properties of both. These are causal, mental and material as have been explained in previous chapters

Spirit, mind and matter are the three principles which are component parts of everything that exists in the universe, be it anything atomic or spectral. These are the three principles that are intermingled with each other and their quality and quantity mould the shape of every object visible or invisible. Nothing is without

these whether a man perceives them or not.

The naturalists have divided the visible creation in three parts—animal, vegetable and mineral. They too are not devoid of these three principles whether one believes it or not. No life, be it of any sort, can exist without light and love They are not exempt from the law of attraction, cohesion and responsation.

Quality and quantity play their part in the formation of these kingdoms. Those endowed with essentiality are in a happy mood, those endowed with grossity are given to lithargy, but those having light in abundance into their formation are active and prone to struggle Man is the intermediate creature that has been placed between these two states and necessarily he finds himself in misery and vexations.

These trinities or rather the three conditional entities have their portion of these faculties but there are degrees in this gift. Mankind has got the gift of light more than others.

The man, as has been said before, is in himself composite of soul, mind and body and though he has body and soul but he is more mental and intellectual from the natural formation of his constitution.

Man is mental; others are not so in comparison to him. What is man? Mind is an intermediate link between body and soul partaking of the properties of both. It is on account of this mind that he is called man. The word man has been derived from the Sanskrit : root 'man' मन In Sanskrit language which is the root of all the Aryan languages, 'man' means to 'think' ; 'manas' is mind. Another name of man in

that language is 'Manushya' (*born* of mind) or descent of Manu which is another name of being endowed with mind principle. So man, properly speaking, is possessed of mental faculty more than anyone else and on account of this faculty he is to be distinguished from brutes.

Some are of opinion that man is animal that cooks his victuals. This definition is wrong for in India are found men who cook not their food but live on fruits, leaves and vegetables. Some people think that man is an animal that dresses himself in garments. This is evidently wrong for in our own country as well as in foreign countries there might be found swarms of men in nude condition. But all the same they are none the less intellectual for that and lead life which is worth living and prefer retirement to gregariousness. Man without intellect is not man but brute and it is given to man and man alone to find out the condition of peace for himself and for those who surround him. That is the ideal or goal of his life.

Param Sant Param Dayal
Faqir Chand Ji Maharaj

NAM- DAN

O ! Sar-Bhedi Pandit ji. You have come to me for NAM-DAN. Listen about the conditions Sant Kabir has laid down for NAM-DAN :—

"See with your own eyes. He is different from body."

Sant Kabir writes that the Lord is different from body. Kabir further writes :—

Glimps with-eyes, the Beloved is in palace.
Renounce lust, anger, ego, greed.
Retain modesty, contentment in thy mind ;
Renouncing wine, meat and falsehood.

In the second hymn Sant Kabir has laid down other conditions :—

Burn down thievery, lust and ill speaking.
Abandone falsehood, keep Sat Guru overhead.
Be in Sat-Sang, pronounce Sat-NAM.

Essential and adequate sermons have been delivered to you. I have explained to you the meaning of SAT-NAM. "Now, you are to follow the inward path practically. SAT-NAM is the real substance or Element and the TRUTH is the Substance. The Initial Shabda

or Word which flows from the Motion in that SUBSTANCE, that Word you should mutter or pronounce. Different saints have given different names to that Initial Shabda which flows from the Motion in the Supreme and Supermost Element. My preceptor, Maharishi Shiv Brat Lal ji Maharaj named this primary Shabd or real-Sat Nam or the Primordial Nam as "RADHASWAMI" the Spoken-Word. His Holiness Hazur Data Dayal ji disclosed to me that the Primodial NAM is Radhaswami.

"Radha the name of Primary Surat ;
Recognize SWAMI, the Primary Shabda.
Know, Guru as Radhaswami."

Hindu scriptures refer to this "NAM" as "SHABDA BRAHMA". With the help of inarticulate-repetition of spoken-Word, you should control your mind. In ancient times this practice used to be started from the centre of rectum. Mind used to be controlled with the help of Pranayam. But as the life span of mankind in this age of machine is very short ; people do not enjoy good-health and they do not follow the principles of celebacy, Therefore an easy and simple method is propounded by the saints so that, the afflicted may take advantage of it and liberate themselves for ever from three-fold afflictions or from Kal and Maya. You are to do the practice of sumiran at the centre of your eye-brows which is papularly known as "Tisra-Til," in order to establish union between your primordial Surat and the Primordial Swami or the Supreme-Mainstay or peace. To do this practice, you shall have to close your eyes, mouth and ears. Both the balls of your

eyes shall have to be united. When your mind would start becoming still and entering a state of trance, your all old dormant or inactive impressions and suggestions of sub-conscious-mind would become active. Different thoughts and visions would attract you. Sant Kabir writes :—

Dakini-Sakini (fearful and pleasing visions)
throw challenges
Demons band roar at virtue.
Listening Sat-Nam run away all,
When Sat-Guru NAM is pronounced.

With the concentration of your mind, different thoughts and visions are bound to die out of your mind Because your mind carries within the impressions and suggestions from your previous as well as from this life. If these impressions are evil, you would visualise dreadful visions like those of snakes, scorpions, witches or of sorceresses. But if these samskaras and impressions are good and virtuous, you would visualise gods, goddesses and beautiful scenes. You should neither feel any fear from the dreadful visions nor you should feel any pleasure from the beautiful and attractive ssenes, because all these good or bad visions are not real. They are only your samskaras and would continue to manifest in different forms and colours like the scenes of a film. However, with your regular and deep concentration, your mind would become still. Then you would see Light within. You should try to concentrate on this Light. If you have feelings of Love and devotion for your Guru, try to visualise the Holy-Form of your Sat-Guru at this centre. If you have

faith in any Holy-Form of God, you can meditate or concentrate upon that Holy Form. And, if you do not have faith and belief in any form, you should concentrate upon Light alone and do sumiran of Radhaswami-NAM without moving your tongue. By doing this Sadhana you would listen the sounds of bell and conch within as if evening prayers are being held. Try to listen these sounds as long as you can. But you shall be able to listen to them for a longer period only when you have love, devotion and ardent desire. Your state of mind should be like that of a virgin girl, whose marriage is being solemnised. Before marriage or her union with her husband, she has an ardent desire, love and devotion for her husband. Kabir writes thus :—

First contemplate upon the Guru ;
meditate affixing attention on mind.
Pronounce Nam in pleasing time ;
then behold the sight of Sat-Guru.

I know not what, Kabir wanted to convey through these words. It is all a net of words. What I have understood and realised is that you would have the charming sight of your Guru within only when your attention is fixed at one point and you are fully lost in the charming Sound within. I do not know, what is meant by pleasing tune (Sohelna Dhun) of Kabir. But, what I understand from it, is, that when a virgin girl is to be married, nuptial songs on the eve of marriage are sung in very pleasing tunes. These song develop an ardent desire, love and ambition in the heart of bride for her husband. Similarly, unless a

devotee develops such an ardent desire and love for the glimps of his Guru, he cannot visualise the form of his Guru within. It is, therefore, very essential that a devotee must have feelings of love and devotion for the glimpse of his Guru. I remember my own days of 1905. I went with love and devotion to Lahore, to have Darshan of His Holiness Hazur Data Dayal Ji Maharaj. When I knocked at the door, His Holiness enquired from within "who are you ?" I replied singing :—

"My beloved Lord, unbolt thy doo ;
Thy Faqir stands outside."

O ! Sar-Bhedi Pandit Ji, the path of saints is the path of Love and devotion. This is a path to be followed with keen interest and an ardent desire. Without Love and devotion you cannot transcen to the centre of Trikuti. But only those devotees, who have crossed the stages of Love and devotion in their previous lives, yearn to traverse the higher stages of spirituality in this life. Those who lack love and devotion, need guidance at intellectual level. For them scientific explanation and logical approach is essential. Firstly they are to be convinced about mind and its nature and then they need to be led directly from Sunna and Mahasunna to the state of Savikalpa and Nirvikalpa Samadhi. Pandit Ji, you have already covered the primary stages. For the attainment of higher stages, one has to be ambitious I have delivered to you five discourses, so that you may attain the condition of primary stages at your intellectual level. You see, a girl is married once, and then she is married again due to certain reasons. Can she have the same

feelings and enthusiasm of her first marriage at the time of her second marriage ? No, she cannot. All those intellectuals who study different religious philosophies critically and have logical approach, have already completed the journey of the primary stages in their previous life. Therefore, it is not essential for them again to start afresh, as I have given you an example of girl's marriage. Those who have covered the lower stages, would not look behind, rather they would walk ahead if they have any aim to attain. However, in this path of Spirituality, a perfect guide (Guru) is most essential, because he is a true judge of your nature and circumstance He would guide you to your Ultimate Goal according to your thought, nature and circumstances.

What is the Ultimate-Goal ? It is SUPREME-PEACE All the stages of inward meditation or Sadhana are but a spectacle or sport of different conditions and suggestions of your own mind Unless you have control over all these conditions, feelings, thoughts emotions, suggestions a d impressions, you cannot attain peace. This "NAM" is for controlling all your thoughts, feeling and desires. "NAM" brings your mind to a state of stillness. The object of Sadhana is to control your mind. Sadhana is not the end It is a mean to achieve the end When, with your love and devotion the Holy-Form of your Ideal manifests at the centre of Trikuti, your mind automatically becomes still. It stops vibrating. It gets a chance to penetrate and think deep. It is due to this fact that this centre of Trikuti is known as the centre of "KNOWLEDGE" At this centre your intellect attains certainty. The

Sound or the Tune that rises from this centre stops the flow of your thoughts. It doe not root out the flow of your thoughts, but it controls the flow. It brings you to a point of stillness. This point is zero which is above OM. When you reach this state of stillness, you come again to me. Do not be irregular in your daily inward practice When the flow of thoughts is controlled, and you see within a red-coloured Sun and listen the thundering of clouds or the sound of Mridang, then come to me again.

The centre of OM is the centre of generation, sustenance and distruction. When all these three stages come to an end, you come to zero. Thereafter the devotee is to penetrate into this zero in order to reach the 10th door and the state of Savikalpa and Nirvikalpa Samadhi. I hope you might have understood the meaning and importance of this Bindoo or Zero. It indicates the state of thoughtlessness of your mind. On penetrating into this Bindu you attain state of thoughtfulness and then the state of thoughtfulness. The entire game at the centre of SUNNA, MAHA-SUNNA, SAVIKALPA and NIRVIKALPA is the game of this Bindu. Hindu scriptures too refer to this Truth, but none has ever tried to understand it. The stages of spirituality start thereafter, beyond this Bindu. Spirituality has nothing to do with this centre of Bindu. When you come again after completing inward-practice or sadhana I would see your progress and attainment, and then only I would give you touch or Samskara of the higher stages.

RADHASWAMI

———

CHAPTER VII

FROM MIRACULOUS EVENTS TO SELF-REALIZATION

by

H. H. Param Sant
Hazur Manav Dayal Ji Maharaj
Dr. I. C. Sharma

Miraculous or paranormal events cannot be dubbed as false But at the same time they cannot be accepted as the Supreme goal of life. There is no doubt that the experiences of the socalled miraculous happenings provide faith and conviction to the common man and also give him self-confidence and moral support. Possibly, the occurances of the paranormal events are the means of leading an aethist and sceptic to God. That is why miraculous happenings have been given premium everywhere. Usually a person accepts the path of self-realization easily and spontaneously, after he experiences such miraculous events. A very few people are keen to attain self-realization or the Supreme Reality. Generally, people visit saints, seers and the sages to get blessings for the fulfilment of their worldly desires. True saints are always compassionate. Even

though they themselves are fully conscious of the supreme ultimate Reality and have no attachment with the physical objects, yet they do not denounce worldly pleasures and do give blessings for the fulfilment of the desires and the needs of the seekers, who approach them. When the desires of such seekers are fulfilled, they get the impression that some miracle has happened to them.

Hundreds of people go to Faqir Baba with the sole purpose of getting their worldly desires fulfilled and supplicate for granting them his blessings. Although Faqir Baba himself has risen above mental level and attained spiritual perfection, yet being a compassionate saint, he blesses people for the fulfilment of their worldly desires. He also gives them blessed food to strengthen their faith. Many times even impossible things become possible for the people who have faith in Faqir Baba and his blessings Many a times his devotees, not only see his form only, but also talk to the form and get funny errands done by that form. Such events have no logical explanation No scientist or intellectual would believe in the possibi ity of such events. Even then such events do happen every now and then in the case of Faqir Baba. It would be desirable to mention one such miraculous event in this context.

A middle aged woman had invited two hundred guests for dinner at the marriage of her daughter. After the dinner, when all the guests had left and the servants went to bed, that lady went to the kitchen. She was simply stunned to see a huge pile of utensils,

waiting to be washed and cleaned. She was really worried and wanted some help. She noticed that a huge picture of Faqir Baba was hanging on a wall in the kitchen. With folded hands she prayed before that picture and requested Faqir Baba to give her the strength to wash and clean those utensils. Suddenly there was a brilliant light in the kitchen and Faqir Baba emerged out of that light. He helped that lady in lifting large utensils and cleaning them in a short time, After this he disappeared. How can such an event be intelligibly explained ?

Faqir Baba has blessed hundreds of childless women to procreate children. His blessings do wonders. Some ladies, who could not go to Hoshiarpur personally would supplicate for blessings for off-spring by praying before his picture. It is astonishing that their wishes were fulfilled. It is strange that some of these childless women, who had crossed the age of monthly course and were more than fifty years old, were also blessed with sons. Faqir Baba himself narrated one of such events to an American deligation of A.R.E., who visited India in 1969. One of the members of that group asked Faqir Baba, "Your Holiness ! We do believe that the power of mind and the miracles are associated with the spiritual power of man. But we have observed that sometimes even those people, who have great psychic powers are not at all spiritual, Why is it so ?" Faqir Baba replied," I do believe in the existence of psychic powers and I also do not deny the miraculous events or happenings. Mind has a great power. The infinite power of mind causes such miracuous events. Every

person has this potentiality. But this force of mind is activated in only those persons who become worthy of it. I will give you an instance to make myself more clear. There is one wealthy person, named Moti Lal, who lives in Indore. He has no dearth of wealth and worldly amenities, but he didn't have any child. Medical doctors had declared that his wife was physically unfit to give birth to any child. When this couple came to me, both of them were more than fity years of age. The wife of Moti Lal came close to me and began to cry bitterly. She said, Baba ! the huge wealth and the vast business of my husband, spread all over India have no charm for me without any child. Compassionate master ! have pity on me and give me blessings to have a son. Please give me your blessed food to have an issue." There was a mango lying near me. I gave that mango to the wife of Moti Lal and said, 'My dear daughter ! eat this Mango. By the grace of God you will be blessed with a son'.

Moti Lal's wife was overwhelmed. She went to her doctor and said, 'My dear Doctor ! You had declared that I would never get a child. Now Baba has given me this blessed mango. I will eat this mano and will soon conceive a child '

After a year Moti Lal's wife gave birth to a son. I named that child Shri Bhagwan. Now dear ones ! listen to another story. I have a daughter, who has been married for about twenty years and she has no issue. I have given her blessed food not once, but several times with the same feeling, with which I had given mango to the wife of Moti Lal. But my daughter

is issueless till now. In fact the truth is that the power of mind works wonders, when one has firm faith. Where the faith is weak even the greatest saint cannot be helpful. Probably my daughter doesn't have that unshakable faith, which the wife of Moti Lal had. That is why she could not benefit from the blessed food."

Faqir Baba gave the above statement in 1969. Upto that time he had many such experiences, which led him to the conviction that faith had great power and the miraculous happenings are certainly the effect of one's spiritual power or progress. Although miracles have a great significance, yet they are not everything. The summum bonum of our life should be beyond miracles and psychic powers. Those who are caught in the mesh of psychic powers, suffer from a blockade in spiritual progress. They cannot attain the supreme goal of life. They can never get rid from the cycle of birth and death. The aspirant has to go beyond the psychic powers to attain the Supreme Goal. He has to help other people and love the whole humanity, any distinction of caste, creed, race and religion. Faqir Baba has been strengthening the faith of the suffering people by helping them by giving them blessings for the fulfilment of their desires and giving spiritual discourses as his Revered Master had ordered him to do. He has never given spiritual discourses to make money for his livelihood. When he retired, the money from his pension was not enough to meet the expenses of his family. So he started working as a clerk at the flour mill of a local business man, He worked at the flour mill honestly and also gave discourses to awaken the

people. The reputation of his spiritual discourses spread far and wide and many people began to attend to his discourses. People of all strata of society attended his discourses and their faith in him increased day by day. His blessings helped people in solving their insoluble problems. When the appearance of his form began to help people in their calamities, they began to call him Miraculous Faqir Baba.

Had Faqir Baba desired to a mass wealth and become famous by keeping his disciples under the darkness of ignorance and hiding the truth that he was not involved in the miraculous happenings, he could have become millionaire. But my Supreme Guru, Faqir Baba was undoubtedly the Incarnation of the Supreme Truth. He always insisted that he never manifested himself in helping people. He repetedly emphasized that those persons, who experience the presence of his form in their difficulties, have firm faith, and their own faith works wonders. As already stated, Faqir Baba does not deny the existence of miracles, but he always emphasizes that people must go beyond miracles, in order to know the Supreme Reality. However, majority of people desire wealth, fame, children and prosperity. Their faith is not strengthened unless they experience miracles and get their desires fulfilled. The saints are always inclined to remove the sufferings of the ignorant people. Faqir Baba, being a true saint and the most compassionate master, always blessed the people from the core of his heart that their sufferings may be removed. With his blessings thousands of people have benefitted. When the news of miraculous happenings associated

with him spread among the people, more and more persons began to attend his discourses. During these discourses, once a Sikh couple approached Faqir Baba with the desire to get his blessings for having a child. The wife of the Sikh gentleman cried bitterly before Faqir Baba and beseached him to grant his blessings for a son. Faqir Baba said, "My dear daughter! when the astrologers have told you that you are not destined to have any child, why are you crying. You should accept your destiny and lead a peaceful life."

On hearing this the lady began to cry more and more bitterly and said, "Oh Compassionate Master ! you can do anything. The blessings of a saint never go waste. You are a saint of saints, a great seer and the Incarnation of the Supreme Being. Please bless me only once and give me the blessed food to have a son." Supremely compassionate Faqir Baba's heart melted. He placed his hand on her head and said, "Why are you insisting me to give the blessed food, when you are not destined to have any child ? All right daughter, however, I bless you and pray God that He may grant your wish of having a child. But what will you gain by giving birth to that son, after whose birth you are destined to die ?"

It is strange that the young woman was not at all disturbed even on hearing the news of her death. She spoke immediately, "Oh my most compassionate Baba ! I sincerely desire a son. I would not be the least disturbed, even if I die soon after seeing the face of my baby. I am prepared to die, but I must have a son. Please give me your blessed food immediately."

Faqir Baba gave the blessed food to that lady and she became pregnant within a few weeks. She was extremely happy. When only three months had been left for the expected birth of the child, the husband of that lady was extremely disturbed. He began to tremble when he thought of the death of his dear wife. He went to Faqir Baba, laid his head on his holy feet, cried bitterly and said, "Oh my most compassionate Master ! have pity on me. With your blessings we are going to have a son shortly. Oh my Master, you are the ocen of compassion. Please save my wife. Please do not let her die. Give me the blessing that both my wife and the expected child continue to live."

Faqir Baba was moved at this pathetic condition of that Sikh gentleman and said, "Youngman ! all right, I give you the blessing and wish from my core of heart that your wife as well as your son will continue to live. But dear one ! you will have to fulfil a condition for the safety of your life and child."

The Sikh gentleman cheerfully replied, "My Lord ! My Master ! I am prepared to fulfil any condition for this kindness of yours." Faqir Baba said, "From today till the birth of your son, you must see me once for few minutes everyday between 12 noon and 1 P M."

Although that gentleman lived far away from Faqir Baba's residence, yet he promised to obey the orders of Faqir Baba, whom he considered to be the Incarnation of God. He religiously went to see Faqir Baba, wherever he was available at that fixed time. Whether rain or shine, he never missed that opportunity. After three months his wife gave birth to a

healthy boy. By the grace of Faqir Baba both the child and the mother stayed alive and the couple became sincere devotees of the Baba.

This example makes it clear that the miraculous events happen only when a person entertains unshakable faith and follows a certain discipline in life. The miracles occur on account of man's own power of mind and discipline helps to make the mind stable.

Now another interesting example needs to be mentioned here in the context of miracles. This event occured more than 25 years ago. Once when Faqir Baba was giving his Satsang in the city of Haidrabad in Southern India, one of the most wealthy persons of that town was also present there. His name was Borgala Mahadev and he had a very large flourishing business, spread all over the province. He had been plagued by many physical ailments for which there was no cure. He was in great distress.

Soon after the completion of the discourse Borgala Mahadev approached Faqir Baba and said to him, "Due to the evil Karmas of my previous lives I am suffering from various incurable diseases. I have heard that saints can cancel one's evil Karmas. I request you most humbly to cancel my past bad Karmas and thus release me from the sufferings."

Compassionate Faqir Baba replied, "Borgala Mahadev ! I do bless you that Almighty God may give you normal health. But to get rid of all your diseases, you will have to give something in return."

Borgala Mahadev thonght that perhaps Baba Faqir wanted some financial help of one or two hundred

thousands of rupees to set up his Ashram. Borgala Mahadev had to dearth of money. The sons of Borgala Mahadev were also present in the assembly, so he glanced at his young sons, in order to find out whether they would be willing to part with some money for that gift. His sons understood the point of their father and gave their assent with broad smiles. After getting assent from his sons Boragala Mahadev said to Faqir Baba, "Compassionate master ! I am your most humble servant, give orders, I will render every service that I am ordered to do."

Faqir Baba was not contemplating on any financial return. He had something else in his mind. So he said to Mahadeva, "Dear Borgala Mahadev ! call a Brahmin priest to do the rituals for that gift or charity." A Brahmin priest was called immediately. Faqir Baba told Borgala Mahadev," Please pour the water in your hand. The priest will read some Mantras. When the Mantra is being read, you should hand over all your bad Karmas of your previous lives as well as of this life to me."

Everybody was stunned on hearing these words of Faqir Baba. Even Borgala Mahadev and his sons were flabergasted. They were thinking that the gift, which Faqir Baba had asked for was the gift of money. But they had never heard about such a strange gift. Complete silence prevailed all over for quite a while, but after a few minutes some of the Satsangies cried loudly, saying, "Oh, Borgala Mahadev please don't do this, don't do this. If you make such a will ritually, all your diseases will be transferred to supremly compassionate Maharaj Ji. Don't be so selfish. Borgala

Mahadev ! it will be the greatest sin."

Before Borgala Mahadev could speak, Faqir Baba ordared the priest to utter the Mantras and also ordered Borgala Mahadev to have some water in his palm. The priest started reading the Mantra. Faqir Baba while receiving the water ritually from Borgala Mahadev's hand said, "Dear Borgala Mahadev ! give all the bad Karmas of your past lives, as well as of this life to me as a gift. I accept that gift of yours. After handing over all your bad Karmas to me. you will be healed by whatever good actions have been done by you."

This is not a fiction, this incident really happened. Borgala Mahadev was healed from all the incurable ailments. He lived for twenty more years without any disease and in the end died a natural death. Borgala Mahadev and his sons became great devotees of Faqir Baba. But Faqir Baba never made any demand from them.

This explanation of the miracles, which asserts that faith, conviction and discipline can expand the power of mind and the expanded mental powers can cause great miracles, is satisfactory. This explanation is so universal, by which we can well understand the truth about the miraculous happenings, which have occured in all religion and faiths from time to time. By understanding this truth we cannot declare the miracles of any religion or denomination as above.

In the examples given above Faqir Baba was himself present, during the miraculous occurrings. He himself strengthened the faith of his devotees concerned. However, there are many other examples also in which

Faqir Baba was neither physically present, nor did he make any effort to strengthen the faith of the experiencers. Even then the miraculous happeninge did take place. A few examples in this respect have already been given. Two more similar examples in this respect will be worth mentioning. In one of these happenings Faqir Baba's form appeared in a snowy desolate place in Canada and the second event occured in a small village of central India, where a school teacher, who had never heard the name of Faqir Baba, before he was benefitted by the appearance of his form. Such type of miracles need a different kind of explanation.

As a matter of fact, there have been numerous miraculous events in America, Africa and other foreign countries, where Faqir Baba's form appeared to the people. But the foreign miraculous happening which is being mentioned here occured in Canada and the experieneer of this event was Dr. Jag.it Singh, exr Minister of Punjab Dr. Jagjit Singh had gone to Canada on official tour. According to him, he and a few other persons had gone on a helicopter for observation in the forest area. On account of some mechanical defect the helicopter had to be landed in a dangerous forest zone. All the passengers were in trouble. There was no hope of returning alive from that dangerous place. Everybody was perturbed. Dr. Jagjit Singh, being terribly frightened began to walk ahead of his companions in that dangerous forest and then suddenly stopped. He began to pray sincerely in his mind for protection and safety. He thought of Faqir Baba, in whom he had firm faith. He prayed to

Faqir Baba earnestly. His sincere prayers in that terrible situation were heard. Suddenly he noticed huge column of Light and Faqir Baba emerged out of that light and said, "Jagjit Singh ! don't worry. Stay where you are. Another helicopter will arrive at this very place within half an hour and rescue all of you to safe place." After saying these words Faqir Baba disappeared

Exactly after half an hour the helicopter arrived there and rescued the party. After this miraculous happening Jagjit Singh went to England and from there he sent a detailed letter, describing this paranormal event. After coming back to India, he went to Hoshiarpur to pay his respects to Faqir Baba and related this event to a huge audience.

In the above example Faqir Baba was not physically present in Canada when Dr. Jagjit Singh prayed for help, and he did not strengthen the faith of Dr. Jagjit Singh personally, as he did done in the previous cases. Even then Jagjit Singh physically encountered the form of Faqir Baba, which told him that another helicopter was arriving for his rescue. What is the secret behind such events ? According to Faqir Baba there is no secret behind such happenings It is a simple fact, which can be explained by the Law of Spiritual Demand and Supply. Whenever a person demands anything from the nature earnestly and sincerely, his mind being concentrated, generates very strong thoughts and God or nature fulfils his demand by providing necessary help. The stronger and more earnest is the demand, the sooner will be its fulfilment.

In the example given above, Jagjit Singh strongly yearned that Faqir Baba should help him in his predicament and Faqir Baba's form had to manifest in that dangerous zone for the fulfilment of that strong demand. This is the natural explanation, Just as the followers of different Gurus, divine Incarnations and prophets experience the vision of their desired form, exactly in the same way Jagjit Singh experienced the manifestation of Faqir Baba, who was his ideal. There is no mystery about this matter.

But this explanation is not applicable to those cases of Faqir Baba's manifestation, in which the experiencer has neither seen him, nor heard of him before. There are many such events. One of these events concernes Mr. Ram Swarup a school teacher of Madhya Pradesh. This event occurred around 1969, when Ram Swarup was teaching in a middle school in a small village. There was dearth of medical doctors in that village Ram Swarup had a little knowledge of allopathic medicines To have some extra income, Ram Sworup started treating the patients of that village without practice licence For sometime his practice flourished. But once while he was treating a wealthy person of that village, he prescribed some strong medicine, which deteriorated the condition of the patient to the extent that he was almost on death bed. At mid night the son of that wealthy man came running to Ram Swarup's residence and informed him about the worst condition of his father. On hearing this bad news Ram Swarup was really upset, because he was practising without a licence. He thought if

the patient died, he would be in great trouble. He would certainly be prosecuted and sent to jail. He was so worried that he could not think of any way to to get out of this mess He prayed to God very earnestly and sincerely that he should be saved from this impending calamity Suddenly, he noticed a huge light in his room and a handsome saintly person appeared before him and said", Ram Swarup ! don't worry. There is an injection in your cupboard ; give that injection to the patient, he will be cured and you will be saved from untoward consequences.

Ram Swarup was very much impressed by the appearance of that handsome form, whom he had never seen before. He followed the instruction verbatim and administered that particular injection to the patient. The patient recovered miraculously. Ram Swarup was saved from being prosecuted, but he could not know anything about the sage-like handsome person, who had appeared on that night.

After several months Ram Swarup came across the monthly journal **Manav Mandir** at the residence of one of his friends, who was the disciple of Faqir Baba On seeing the picture of Faqir Baba on the front page of the journal, he was simply stunned. That was the picture of his saviour, that sage-like hand ome person, who had appeared in his room several months ago. He related the whole story of that miraculous event to his friend. He got the address of Faqir Baba and went to Hoshiarpur immediately to pay his respects to the great sage. Faqir Baba related this event himself to Betty Atkinson, a beautiful young American lady, who

had come to pay her respects to the Baba in 1970. The same event was later on published in a small book, named **"A Word to Americans."**

How can we explain the experiences of those persons who are benefitted by Baba's manifestation, even though they do not know him, or have heard about him ? Once I had asked this question from Faqir Baba himself. He told me that when a person is in helpless state and finds no way out of that predicament, when all the doors are closed for him, at that time he surrenders himself completely to God. In this state, he forgets everything and even his ego. His mind, his intellect his higher education, his status in society and all his worldly achievements pale into insignificance. At that moment he feels that he is worthless, his false pride vanishes and he bows down to the Supreme Reality. In such a situation miraculous events take place by the grace of God, according to the Law of Spiritual Demand and Supply.

The ignorance of the fact that all miraculous events occur due to the great power of human mind, leads a person to have blind faith in some external power or a particular form of the Supreme Reality. He goes on entertaining the false notion that some external power comes to help his. Once I had asked Faqir Baba why did his form appear to those persons in their calamities, who had neither heard his name or seen him ? Faqir Baba replied, "Manav Dayal ! I myself wonder why do people, who even don't know me, experience the form of my personality. I believe that every event has a cause, nothing happens without

a cause. It appears to me that the people, who profess their ignorance about my personality, but see or experience the presence of my form, must have known me directly or indirectly It is also possible that they might have seen me somewhere and lateron forgotten about the encounter, or they might have heard about me or read about me, but don't remember. If you are not satisfied with this answer, I tell you another explanation, such persons might have had some association with me in their past lives and my form be present in their sub-conscious mird. That is why those people experience the manifestation of that form."

I was satisfied with this wonderful explanation of Faqir Baba. Two things are very clear from the explanation of the miraculous events mentioned above. The first thing is that since God is supreme Being, he cannot be associated with anyone particular form or shape. The cause of hatred and mutual differences between religions, denominations and faiths is the misunderstanding of the fact that the Supreme Being is One and the different forms and shapes, accepted by different religions and sects are manifestation of the same Ultimate Reality. The whole trouble starts when different forms of Rama, Krishna, Buddha, Mahavira, Moses and Jesus Christ are accepted as the absolute forms. Second thing is the fact that real God or Supreme Being is beyond miracles. The supreme goal of man's life should not only be beyond the miracles, but should be even beyond the source of miracles. In reality the God is neither the form of the Guru, nor any incarnation, nor preceptor and

nor even the creator. The real God or Supreme Being is beyond all these categories. This Supreme Being or ultimate Reality can be realized only when a true saint crosses all the limits of religion, sects and rituals and reveals this truth to the masses. If this truth is expressed in a simple and straight language to the general public, it will be financially harmful for those contractors of religion, heads of the Churches, denominations and the self-styled Gurus, who thrive on harping of differences between religion and religions. That is why such persons are afraid of telling the truth to the masses.

The fearlessness with which Faqir Baba has revealed this secret for the benefit of the masses, on the basis of his real experience is undoubtedly remarkable. Faqir Baba is the Incarnation of Truth. The main purpose of his life is to remove the ignorance of the simple-minded people and to lead them to experience the Supreme Reality or the Supreme Being. He was always pained to see the ignorant people, being exploited by the religionists. According to him, "The self-styled contractors of religion aave exploited the ignorant masses by harping up n the miraculous events and by associating those miracles with a particular personality or personalities. Common people should understand that miracles are within the limits of the law of nature Param Tattva God is One. His various forms and shapes function according to the law of nature Those saints or seers, who do not give truc explanation of the miracles to their devotees and followers deceive and exploit them. A great injustice has been

done by hiding this secret from the common man. This lacuna has been mainly responsible for the increasing hypocricy, blind faith and violence, based on the differences between religions, sects and denominations. The true knowledge of the Supreme Being or Supreme Reality alone can save the suffering humanity and lead it to spiritual liberation. People can never be released from the cycle of birth and death, as long as they are caught up in the mesh of miracles."

Important Notice

Manavta Mandir will be glad to avail of the services of any volunteer in the premises either in office or administration or in any other capacity with or without honorarium plus boarding and lodging.

The desirous may write to Sh. S. L. Sethi, Secretary Manavta Mandir, Hoshiarpur (Punjab).

Secretary
Manavta Mandir,
Hoshiarpur (Pb.)

Let Go and Let God

—by Sudesh Gupta

Have we ever realized that from the conception of our birth, God has filled us with His Spirit? He manifested Himself throngh us and as us. We are His extension made in His Image and Likeness and endowed with all His characteristics; Love, faith, hope, freedom, strength and forgiveness. Our birth is expression of His idea for life to continue forever.

Inspite of our heritage in God, why do we live our lives so frantically that we become prisoners in this life instead of being free in it? It is because we have forgotten our heritage in God and behave as if man is a superior than God. We have forgotten that there is Higher power—God who manifested this universe. God has a plan for all of us and He knows every living human being and his needs. We can know ourselves if we are willing to surrender ourselves to Him. Our anxieties, fears and day-to-day problems will have no place to grow in our minds and hearts if we learn the principle of 'Let Go and let God'. First we must acknowledge our oneness with God and be surrendered to His Will for us. Whenever we are in need of help or healing we can ask God to take eare of these needs and show us the path of wisdom and Truth. This way we can let go of all our worries and anxieties. We

must learn to quiet our mind, learn to meditate and feel His presence within us. We must allow Him to be our companion in life to guide us in our actions daily. In face of our challenges, we must be humble enough to acknowledge the Supreme Power, that is God, within us and ask Him to show us the solution to these challenges and then be open to His ideas. We must always pray to Him and envision yourself accomplishing our tasks and goals in life whatever they may be and give thanks to Him in advance. God is ever increasing supply of our needs He gives us more than what we ask of Him. When we have attitude of gratitude God is always pouring out His Blessings upon us in greater supply.

The concept of reality is misunderstood by most of us, What we think reality is merely our perception of reality through our distorted vision that we have been carrying with us all our life long. It is not actually what reality is. We see things or interpret things in a way that best suits our needs. Its our mind which has been programmed to think in a certain way due to our upbringing that way, that we tend to believe it right the way we see things and the way we think and that to us is reality. For example, a rope in the dark may appear to be a snake to someone who is afraid of dark. It is not a snake in reality, it is a rope. Similarly all our fears, worries, restlessness, stem from our way of thinking. Our relationships with others have become sour due to our misperception of them, not being able to understand who we all are. We have forgotten the brotherly love for one

another. We tend to believe that it is our circumstances or people which have control over us and we can do nothing to change them, other than to live in fears and worries. The fights between nations and between our own people are the result of our distorted perception. We have become disillusioned in our thinking that there is no other alternative but to strike back as hard as we can. This is our negative thinking that leads us to see things negatively and that to us is reality. Our minds perceive things not as they are but as they should be. It does not have to be that way. We can change our thinking, and our circumstances and have people respond favourably to us. We all are children of God and therefore brothers and sisters. Since God is always loving and forgiving, we also must be loving and forgiving. We can forgive others when they hurt us or take advantage of us and we can forgive ourselves for having negative thoughts about them God forgives everyone who comes to Him. We must affirm our faith in Him. Let Him take our worries and send us help to resolve these problems. We can do this only when we love God and surrender ourselves to Him fully. We can learn to love others as God loves us all. We can pray to God for those who hurt us, or any challenges that we might have and ask Him to work through all of us and to put us on right path. We will feel relaxed as we do this and have more energy in us to serve Him with all our heart and soul. God will open doors for us that we may not have imagined otherwise. When we learn to think positively, we get positive results

and feel enthsiastic. We are then able to relate better with others and harmonize our environment with love and understanding. We are meant to live happy lives and help others to live happy prosperous lives. Our thoughts, whether positive or negative, have the power to travel to any distance and cause likewise results. It is impossible to ask others to love us when we are harbouring negative thoughts about them. We can change ourselves and our circumstances, when we become attuned to God within us. With God everything is possible. God is always working through us. We bring our highest good when we believe in Him firmly. Let God take the burdens off our shoulders and leave us in peace. God is our Mother-Father always guiding us on the right path and we must be thankful to Him.

———

Monthly Message

OF

H. H. Param Sant
Hazur Manav Dayal Ji Maharaj
Dr. I. C. Sharma

My dearest Satsangees,

Radhaswami and Blessings of the Supreme Compassionate Lord !

This time I would be able to communicate with you only for a short while through this monthly message. The reason is that my article which is being published in this issue is quite lengthy. I do not want to divide that article into two instalments. This is so because I want you to read that article carefully and consider that to be my monthly inspiring address.

However, I want to give you a brief information about my January tour after Itarsi (Madhya Pradesh). As I have already stated, many out-siders had also come to Itarsi to participate in the Satsangas. One of them was Shri S. N. Bhatta who is the Acharya of Madhya Pradesh. He accompanied us to Tarana in the railway train. Spiritual discourses were organized

on the 4th, 5th and 6th January in Tarana near Ujjain at the farmof Late Seva Ram Ji who was a dedicated devotee of Param Dayal Ji Maharaj. He was very active organizer of Tarana in Ujjain and his Memorial is built in that farm. A huge Shamyana (open tent) had been put up which accommodated about six thousand Satsangis from Tarana, Ujjain and vicinity. They were all very keen to attend the Satsangs. I was impressed to see that thousands of Satsangis had gathered there and slept under the open tent during the three nights. One night I visited them and asked whether they were troubled in the open tent in the night. They replied, "we are overwhelmed on having your discourses. We are habituated to sleep outside in the open like this." Later on I came to know that these satsangis would sit in groups till late in the night and discuss among themselves the main points of the Satsangs of which they could benefit in their lives. The Satsangs in Tarana were very well received. Besides our regular satsangis many outsiders also participated enthusiastically. One of them was a noted Hindi poet of (M.P.) named Shiv Upadhaya. After listening to the discourses for three days he composed a poem expressing his impressions of the satsangas and recited to the audience. This poem has been published in the May issue of this journal. You will realize what a deep impression was left on the minds of the satsangis during the Tarana discourses.

As far as I am concerned, I can say that I was in a state of trance during the discourses. I felt as if my experiences and thoughts were spontaneously going

out of the core of my personality like currents on which I had no control On the fourth day we started for Indore via Ujjain.

We stopped over in Ujjain for a short while at the house of Rama Bai and her brother Sri Bansi Lal Shrof. It is necessary to tell here that a family of Sewa Ram Ji in Tarana, his wife and two of his sons Ghanshyam Das and Bal Ram Das were engaged in organizing the Satsang in Tarana day and night. Mrs. Rama Bai and her husband Shri Goyal along with her whole family had also come to Tarana to help organize the satsang. In fact the Satsang at Tarana was also ment for the satsangis of Ujjain many of whom had come to participate in it already. In the same way when the satsang was held in Ujjain, satsangis from Tarana also joined. While at Tarana we also went to a neighbouring village Itawa for delivering satsang in which hundreds of satsangis participated. Mrs Dayal Puttri Lila and her nephew Mr. Mahendra Gupta had already come to Tarana to ascort us to Indore. They took us to Indore by car on the 7th January. Three satsangs were organized there upto 9th January and all of them were very effective. One lecture was also delivered at the Govt. Girls College, Indore and the other at the residence of Mrs. Lila at Dhanvantari Nagar. After fulfilling these commitments we left Indo·e on the 9th January and arrived in Delhi on the 10th morning.

As I have already stated, this monthly message has to be brief on account of shortage of time and space. The tour information beyond the point mentioned above would be given in the next issue.

With these words I send you all my sincerest wishes for this month and bless you for enjoying healthy body, happy mind and harmonious soul so as to experience the bliss of merging into the Supreme Sound (Word).

Yours in Faqir
Manav.

प्रार्थना

राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
अलख अगम और अनामी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
परम सन्त का रूप धरा, जीवों पर उपकार किया
सीधा सच्चा मार्ग दिया, आये धुर पद धामी
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी
बन कर आये परम फ़कीर, हरने सब जीवों की पीर ।
परम दयालु दानी वीर, नाम दान के दानी
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
राम भी हो और कृष्ण भी तुम ।
तुम महावीर और बुद्ध गौतम ।
अक्षर ब्रह्म और पुरुषोत्तम, सब नामों में अनामी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
मानवता का किया प्रचार, निज अनुभव का दे दिया सार ।
ऐसे गुरु को बारम्बार, नमामि नमामि नमामि ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
दाता दया[illegible] प्यारे तु[illegible]वारे तुम ।
निर्गुण और सगुण भी तुम, सब के अन्[illegible]मी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।

Regd. No. 26265/74 JUNE 10th 1986

MANAV MANDIR NWHSP— 7

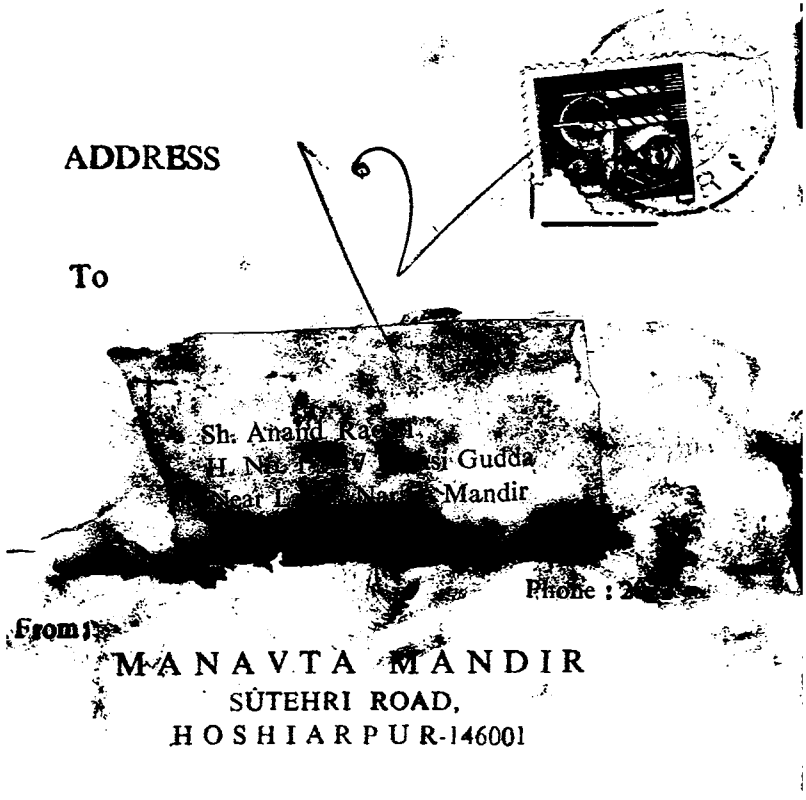

ADDRESS

To

Sh. Anand Ra...

H. No. 1... 7 ...si Gudda

Near L... Na... Mandir

Phone : 2...

From :-

MANAVTA MANDIR

SUTEHRI ROAD,

HOSHIARPUR-146001

Shiv Dev Rao Press Manavata Mandir, Hoshiarpur (Pb.)